वेदों में वैद्यक ज्ञान।

लेखक

स्वर्गीय लाला राधावल्लभजी
वैद्यराज
सम्पादक आरोग्यसिन्धु।

प्रकाशक

बांकेलाल गुप्त मैनेजर
श्रीधन्वन्तरि कार्य्यालय

विजयगढ़ (अलीगढ़)

Only Cover Printed at the "Narsingh Press" Calcutta

वेदों में वैद्यक ज्ञान

स्वर्गीय ला० राधावल्लभ जी वैद्यराज
विजयगढ़

The National Press, Allahabad

* श्रीधन्वन्तरयेनमः *

वेदों में वैद्यक ज्ञान।

जिसमें

ऋक, यजुः, अथर्व वेदों के अनेक मन्त्र जिन में
आयुर्वेदीय विषयों का वर्णन है तथा जिनसे
आयुर्वेद की प्राचीनता सिद्ध होती है
शब्दार्थ तथा भाषार्थ सहित
वर्णन किये गये हैं।

लेखक—

राधावल्लभ वैद्यराज

सम्पादक "आरोग्यसिन्धु" विजयगढ़।

प्रकाशक—

वांकेलाल गुप्त मैनेजर

धन्वन्तरि कार्यालय—विजयगढ़।

द्वितीयवार १००० } मई सन् १९१८ ई० { मूल्य ≡) तीन आना

Printed by Brahmadeva Misra at the
Brahma Press—Etawah.

श्रीः ।

उपोद्घात ।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से अनादि और अपौरुषेय हैं–ऐसा विश्वास भारतवासी आर्य्यसन्तान का है। भिन्नधर्म्मी विदेशी मनीषी लोग भी वेदों की अतिप्राचीनता एक स्वरसे मानते हैं। यदि हम विदेशी लोगों के मतको ही थोड़ी देर के लिये मानलें तो वेदोंमें वर्णित, ज्ञान, विज्ञान, धर्म्म, कर्म्म, रीति, नीति, चिकित्सा आदि जिनका हम से सम्बन्ध है अति प्राचीन काल में भी थे यह बात निर्विवाद सिद्ध होती है॥

ज्योतिष, व्याकरण, निरुक्त आदि के समान आर्य्य चिकित्सा भी वेदों से निकली है। तब ही तो यह आयुर्वेदीय चिकित्सा कहाती है। आयुर्वेद अथर्ववेद का उपवेद है कोई कोई आचार्य "ऋग्वेदादायुर्वेदः" ऐसा कहते हैं। यद्यपि चारों वेदों में वैद्यक विषय पाये जाते हैं परन्तु अथर्ववेद में अन्य वेदों के देखे वैद्यक विषय अधिकता से वर्णन किये गये हैं इस से ही वैद्यक शास्त्र अपने को अथर्ववेदका उपाङ्ग मानते हैं। हमारी चिकित्सा वेदाङ्ग होनेसे अनादिकालसे चली आई है और विदेशी लोगोंके मतानुकूल अति प्राचीन है।

वेदों में हर एक विषय बीजरूप से वर्णित है। वेदों का जितना विचार और ढूंढ खोज की जावे उतने ही उत्तम २ विषय उस में पाये जाते हैं। वेदों का पठन पाठन हम लोगों का परम धर्म है। हम ने इस छोटी सी पुस्तक में थोड़े से वैद्यक विषयोंको (जो वेदोंमें बीजरूपसे पाये जाते हैं) लिखा है। इन मन्त्रों को निरपेक्षभाव से विचारनेसे बहुत सी बातों का ज्ञान प्राप्त होगा। यह भी ज्ञात होगा कि हमारी चिकित्सा

का वेदों से कैसा सम्बन्ध है। वेदों में वनस्पतियों की अचिन्त्य शक्तियां, अपामार्ग, कूट, पीपल, लाख भृंगराज आदि औषधियों के प्रधान गुण औषधियों का संचय करनेका उपदेश, विधियुक्त सेवन करना, बनाना आदि वर्णन किये हैं। कुष्ठ की चिकित्सा एक आसुरी करती थी उस ने इस विद्या को गरुड़से सीखा था, जमदग्निने अपनी पुत्री के लिये केशों को बढ़ाने और काली करने वाली औषधि उखाड़ी थी, ऐसी २ बातें भी अथर्ववेद में स्पष्ट वाक्यों में लिखी हैं। शरीर के भिन्न २ अंगोंका और कास, यक्ष्मा, शीतज्वर, पाण्डु, हृद्रोग उन्माद विद्रधि आदि रोगों का वर्णन है। कृमियोंका विस्तार से विवेचन है। अग्नि, जल, वायु का वर्णन किया गया है। ऋतुओं का वर्ताव मृत्युसंख्या, शारीरिक, शस्त्रक्रिया, रश्मिचिकित्सा, वायु चिकित्सा और जलचिकित्सा भी कही गई है। अश्विनीकुमारों के विचित्र कार्योंकी गुणावली गाई गई है। इन विवेचनाओं से पता चलता है कि जब प्राचीनकाल में विदेशी लोग अन्धकार से आच्छन्न थे उस समय आयुर्वेदीय चिकित्सा ही संसार को स्वास्थ्यामृत पिलाकर जीवित करती थी। जिन बातों को आज के विद्वान् नवीन आविष्कृत बतलाते हैं वे बातें हमारे यहां पहले से ही बीजरूप से मौजूद थीं। हम आशा करते हैं कि हमारे पाठक इन विषयों को ध्यान से पढेंगे।

राधावल्लभ वैद्यराज

ओ३म्।

वेदों में ओषधि प्रार्थना।
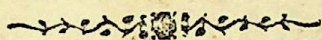
(१)

या: फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी:।
बृहस्पतिप्रसूता स्तानो मुंचन्त्वंहस:॥

यजु० १२ अ० ८९

शब्दार्थ-बृहस्पति द्वारा आविर्भूत फलयुता अथवा फल रहिता पुष्पों सहित अथवा पुष्पों रहित जो औषधियां हैं वे हमारे रोगजनित दु:खों को दूर करें।

भावार्थ-अनेक प्रकार की औषधियां चाहें वे फल फूल वाली हों अथवा बिना फल फूलों की, उनमें अनेक प्रकार के कष्टों को दूर करने की शक्ति रहती है। परमात्मा ने उन्हें हमारे दु:ख निवारणार्थ उत्पन्न किया है। औषधियां केवल शारीरिक रोगों को दूर करनेवाली हैं यह बात नहीं है किन्तु उनमें अचिन्त्य शक्ति है। अनेक औषधियां अपने प्रभाव से मनुष्यों को सतोगुणी बनाती तथा मन बुद्धि और अन्त:करण को पवित्र करती हैं जिससे मनुष्य शुभ कर्मों में प्रवृत्त होकर आध्यात्मिक ज्ञान सम्पादन करके अनेक प्रकार के दु:खों से छुटकारा पाता है। इसही विषय को अगले मन्त्र में वर्णन यों किया है:-

मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत
अथो यमस्य पड्वीशात् सर्वस्माद् देवकिल्विषात्॥

यजु० १२ । ९०

शब्दार्थ-वे औषधियां मुझको शपथ सम्बन्धी दोष सज्जन निन्दक-दोष, यमराज के आतङ्क के भय, तथा देवताओं के प्रति किये हुए सम्पूर्ण अपराधों से छुड़ावें।

भावार्थ-शुद्ध अन्न औषधियोंका उपयोग करके मेरी बुद्धि निर्मल हो, जिससे मैं किसीकी मिथ्या शपथ न खाऊं अर्थात् झूठ न बोलूं। तथा माननीय श्रेष्ठ पुरुषों की बुराई न करूं, आजन्म सन्मार्ग में प्रवृत्त होऊं जिससे मुझे यमराज के दण्ड का भय न हो। देवताओं को यज्ञों में सोमलता आदि हव्य का भाग दूं उन्हें अर्चन और उपासना करके प्रसन्न रक्खूं, जिससे उनके द्वारा किसी प्रकार का भय न हो तथा आधि व्याधि मुझे न सतावें।

अवपतन्तीरवदन्दिव ओषधयस्परि ।
यं जीवमश्नवामहै न स रिष्याति पूरुषः ॥

यजु० १२ । ९१

शब्दार्थ-(दिवः) स्वर्ग से (अवपतन्ती) उतरती हुई (ओषधयः) औषधियां (परि) मिलकर (अवदन्) बोलीं (यं) जिस (जीवम्) जीवको (अश्नवामहै) हम प्राप्त होवें (स) वह (न) नहीं (रिष्याति) दुःखी होगा।

भावार्थ-इस मन्त्रसे जाना जाता है कि पहले स्वर्गमें देव वैद्योंने औषधियों का उपयोग किया। पीछे वह चिकित्सा

कर्म भूलोक में लाया गया । पूर्व मन्त्र में "वृहस्पतिप्रसूता" यह पद आया है और भी कई मन्त्रोंमें भी ऐसे ही पद आये हैं, इससे अनुमान होता है कि देवताओं के गुरु वृहस्पति ने इन ओषधियों के गुणों को जानकर स्वर्ग में देवताओं को उपदेश दिया । इस ही अध्याय के ७५ वें मन्त्र में कहा है । (या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा) अर्थात् जो ओष-धियां देवताओं से ३ युग पहले प्रकट हुईं । इस श्रुति वाक्य से जाना जाता है कि देवताओं ने तीन युग में औषधियों का ज्ञान सम्पादन किया । सब से प्रथम स्वर्गलोक में चिकित्सा शास्त्र का प्रचार होना आयुर्वेदीय चरक सुश्रुतादि सब ही ग्रन्थों में स्वीकार किया गया है । किन्तु उनमें आयुर्वेद शास्त्र का सब से पहले व्याख्याता श्रीब्रह्माजी लिखे हैं उसके पीछे दक्ष, अश्विनीकुमार, इन्द्र, क्रमशः लिखे हैं किन्तु इन वैदिक श्रुतियों में "वृहस्पतिप्रसूताः" ऐसा कहने से जाना जाता है कि उपर्युक्त देवों ने सम्पूर्ण अष्टांग आयुर्वेदका उपदेश किया होगा सुरगुरु वृहस्पति ने औषधियों के गुणों को विशद रूप से वर्णन किया ।

त्वां गन्धर्वा अखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां वृहस्पतिः ।
त्वामोषधे सोमो राजाविद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

यजु० १२ । ९८

शब्दार्थ–तुझको गन्धर्वोंने इन्द्र ने वृहस्पति ने खोदा, हे ओषधे ! तुझे सेवन कर विद्वान राजा सोम यक्ष्मा रोग से छूट गया ।

भावार्थ-स्वर्ग में गन्धर्वों ने इन्द्र बृहस्पति आदि देवताओं ने ओषधियों को उखाड़ २ कर उनके गुणों को जाना तथा देवताओं को उपदेश किया, राजा सोम (चन्द्र) इन ओष-धियों को सेवन कर कठिन यक्ष्मा रोग से छूट गया । राजा सोम को यक्ष्मा रोग होना आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भी लिखा है "राज्ञश्चन्द्रमसोयस्मादभूदेष किलामयः। तस्मात्तं राजयक्ष्मेति प्रवदन्ति मनीषिणः" अर्थात् राजा चन्द्रमाको यह रोग पहले हुआ था इसही से विचारशील इसे राजयक्ष्मा नाम से पुकारते हैं ॥

ओषधयःसमवदन्त सोमेन सह राज्ञा ।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन् पारयामसि ॥

यजु० १२ । ९६

शब्दार्थ-औषधियां सोम राजाके साथ बोलीं कि हे राजन् वेदविद्वैद्य जिस रोगी के लिये मुझे उपयोग कराता है उस रोगी को वह रोग रूपी सागर से पार करता है ।

भावार्थ-सोम राजा जब यक्ष्मा रोग के निवारणार्थ इन ओषधियों को सेवन कर रहा था तब इनके रोगनाशक अपूर्व प्रभावों का अनुभव प्राप्त किया और यह बात अच्छे प्रकार जानली कि जो वेदज्ञ वैद्य, विचार पूर्वक इन अचिन्त्य शक्ति औषधियोंको रोग निवारणार्थ देगा वह अवश्य सफल मनोरथ होगा, यह विषय श्रुति में आलङ्कारिक ढंगसे कहा है इस

मन्त्र से यह उपदेश मिलता है कि औषधियों को देने वाला वैद्य पूर्ण शास्त्रज्ञ हो। ॥

नाशयित्री बलासस्यार्शस उपचितामसि।
अथो शतस्य यक्ष्माणां पाकारोरसि नाशनी ॥

यजु० १२।९७

शब्दार्थ-हे औषधे! तू कफरोग और बढ़े हुए अर्श रोगके नाश करने वाली है, इसी प्रकार शोथादि रोग तथा अन्य सैकड़ों प्रकार के रोग को दूर करती है।

भावार्थ-सोम राजा ने यह भी जाना कि इन औषधियोंमें अनेक दुःसाध्य और कठिन रोगोंके नाश करनेवाली शक्ति है।

मावोरिषत् खनिता यस्मैचाहं खनामि।
द्विपाच्चतुष्पादस्माकꣳ सर्वमस्त्वनातुरम् ॥

यजु, १२।९५

शब्दार्थ-तुमको खोदने वाला दुःख न पावे, जिसके लिये मैं खोदता हूं वह भी दुःख न पावे हमारे मनुष्य, आदि सब सुखी हों।

भावार्थ-मनुष्य औषधियोंको विना प्रयोजन न उखाड़े। क्योंकि परमात्मा ने इन्हें रोग नाश करने के लिये बनाया है। इन का उपयोग कर अपने प्रिय कुटुम्बी जन इष्ट मित्र तथा पशु पक्षियों को सदैव निरोगी रक्खे।

दीर्घायुस्त ओषधे खनिता यस्मै चत्वा खनाम्यहम्।
अथो त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा विरोहतात् ॥

यजु० १२। १००

शब्दार्थ-हे ओषधे तेरा खोदने वाला दीर्घायु हो और जिस के लिये मैं खोदता हूँ वह भी दीर्घायु हो और, तू भी दीर्घायु हो कर सैकड़ों अंकुरों युक्त उगे ।

भावार्थ-इस मन्त्र में कृतज्ञता का उपदेश है। जिन ओषधियों से रोग नाश हो हम दीर्घायु हों उन का सर्वथा नाश न करे। जो औषधियां अपने अंगों को देकर उपकार करती हैं उन का उपकार माने। उन की सराहना करता हुआ तथा ईश्वर को धन्यवाद देता हुआ इस प्रकार उखाड़े कि वे पुनः हरी भरी होकर पहले से अधिक वेग से उगें ।

या ओषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः शतविचक्षणाः ।
तासामसि त्वमुत्तमारं कामाय शंᳮहृदे ॥

यजु०, १२। ६२

शब्दार्थ-सोमलता है प्रधान जिन में अथवा सोम है राजा जिन का ऐसी सैकड़ों गुणों से व्याप्त बहुत सी औषधियां हैं उन औषधियों में तू सर्वोत्तमा है सो मेरे हृदय के लिये सुख दे मेरी इच्छा पूर्त्ति के लिये पूर्ण हो।

भावार्थ-इस में किसी एक ओषधि के प्रति प्रार्थना है और यह भी दिखलाया गया है कि सब ओषधियों में सोमलता प्रधान है। जो कि सर्व श्रेष्ठ रसायन है सुश्रुतादि ग्रन्थों में जिस का गुण बिस्तार से वर्णन किया गया है। जिसे देवता पान करते हैं अथवा ओषधियों का राजा

(अर्थात् प्रकाशित करने वाला, पूर्ण करने वाला) सोम है। चन्द्रमा के समय में (रात्रि में) अथवा चन्द्रबल प्रधान ऋतुओं में ओषधियां बढ़ती हैं। और ओषधियों में सैकड़ों शक्तियां हैं। किन्तु हमारे इच्छित कार्य्य को जो औषधि पूर्ण करे वह ही उस समय हमारे लिये सर्वोत्तमा है। "तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते,,

या ओषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताः पृथिवीमनु ।
बृहस्पतिप्रसूता अस्यै संदत्त वीर्य्यम् ॥

यजु० १२ । ९३

शब्दार्थ-बृहस्पति के द्वारा प्रकट की गईं जो सोमलता प्रभृति औषधियां इस पृथ्वी पर हैं वे इस स्त्रीको वीर्य देवें ॥

भावार्थ-मनुष्यों को चाहिये कि सोमलता पृभृति औषधियों को स्त्रियों को सेवन कराके उन्हे बलवती बनावें। शुद्ध रज उत्पन्न हो ऐसा यत्न करें जिस से हृष्ट पुष्ट सन्तति उत्पन्न हो जो युवा हो कर संसार का कल्याण करे ॥

याश्चेदमुपशृण्वन्ति याश्च दूरं परागताः ।
सर्वाः संगत्य वीरुधोऽस्यै संदत्त वीर्य्यम् ॥

यजु० १२ । ९४

शब्दार्थ-जो ओषधियां (यहां पर) सुनी जाती हैं (मौजूद हैं) और जो ओषधियां दूर देश में पाई जाती हैं वे सब लतायें मिलकर इस स्त्री के लिये वीर्य देव।

भावार्थ-सद् वैद्यों को चाहिये कि अपने देश की तथा दूर देश से आने वाली दुष्प्राप्य औषधियों को संग्रह करके रक्खें और उन को यथोचित मिलाके अर्थात् उन का प्रयोग (नुस्खा) बनाकर स्त्रियों के रज और पराक्रम वृद्धिके लिये सेवन करावें ॥

सहस्व मे अरातीः सहस्व पृतनायतः ।
सहस्व सर्वं पाप्मानं सहमानास्योषधे ॥

यजु० १२ । ९९

शब्दार्थ-हे औषधे तू सहन शक्ति वाली है। इस से मेरे शत्रुओं को सहन कर, सेना को साथ लेकर युद्ध करने वालों को सहन कर, और सम्पूर्ण दुःखों को सहन कर।

भावार्थ-भूपति आदि शासन कर्त्ता रासायनिक औषधियों को सेवन कर पूर्ण वलशाली बनें तथा अपनी सेना को बनावें। जिस से वे शत्रुओं से दुःखी न हो सकें न कोई सेनाको चढ़ा कर लाने वाला योद्धाओंको पराजय करसकें। और न उन्हें रोग ही सताकर दुःखी करे। क्योंकि औषधियों में पूर्ण बल देने वाली शक्ति है ॥

यदिमा वाजयन्नहमोषधीर्हस्त आदधे ।
आत्मा यक्ष्मस्य नश्यति पुरा जीवगृभोयथा ॥

ऋ० ८ । ५ । १० । १

शब्दार्थ-जो इस औषधि को बलवती बनाकर मैं हाथमें

लेता हूँ। इस से रोग की आत्मा नाश होती है जैसे पहले जीवगर्भ॥

भावार्थ-किसी रोग को नाश करने के लिये पहले औषधि को वीर्यवती बनावे और पीछे उसे विधि अनुसार सेवन करे इस से रोग का बीज नष्ट होता है। औषधियों में अपूर्व शक्तियां हैं किन्तु उन को प्रकट करना चाहिये। विना विधि औषधि सेवन करना निष्फल जाता है॥

वनस्पतिः सह देवैर्न आगन्।

रक्षः पिशाचानपबाधमानः॥

अथर्व० १२।३।१५

शब्दार्थ-दिव्यगुणों करके सहित वनस्पति राक्षस और पिशाचों को नाश करती हुई आई॥

भावार्थ—दिव्य औषधियों में अपूर्व शक्तियां हैं इन से राक्षस और पिशाचादि दूर होते हैं। उन्मादादि रोगों में पिशाचादि ग्रहों को माना है औषधियों द्वारा वे हटाये जाते हैं किन्तु वे साधारण ओषधियों से दूर नहीं होते। देवादि ग्रहों में दिव्य गुण होने से दिव्य गुण वाली ओषधियां ही उन्हें नाश करती हैं। आज कल के विद्वान् राक्षसादि को रोगोत्पादक जन्तु मानते हैं। किन्तु भूतविद्या पर विश्वास रखने वाले पुरुष राक्षसादि ग्रहोंको योनि विशेष मानते हैं।
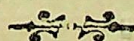
या ओषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा ।

मनैनुबभ्रूणामहं शतं धामानिसप्त च ॥

यजु० अध्याय १२ । ७५

शब्दार्थ–जो पुरातन औषधियां देवताओंसे तीन युग पूर्व उत्पन्न हुईं अथवा देवताओं से तीन युगों में उत्पन्न हुईं। उनको तथा उन अनेक वर्णवाली औषधियों के एकसौ सात मर्म्म स्थानोंको, या अनुलेपन, मार्जन, अभिषेक आदि आश्रय भूत स्थानों को मैं जानूं।

भावार्थ–इस मन्त्र से कई भाव निकलते हैं। जिन औषधियों का ज्ञान देवताओं ने बहुत दिनों में सम्पादन किया। अथवा वे औषधियां देवताओं से तीन युगों में उत्पन्न हुई, कलियुग में औषधियां हीन वीर्यवाली हो जाती हैं इससे इस युग की गणना नहीं की गई। युग शब्द ऋतुवाचक भी है इससे यह भाव भी निकलता है कि जो औषधियां पृथ्वी आदि तत्त्व रूप देवताओं से बसन्त बर्षा शरद् इन तीन ऋतुओं में उत्पन्न हुई। युग शब्द का संवत्सर अर्थ भी है इस से जिन औषधियों को पृथ्वी आदि से उत्पन्न हुए तीन बर्ष हो गये हैं अर्थात् परिपक्व वीर्य्यवाली होगई हैं उन औषधियों का हम ज्ञान सम्पादन करें उनके मर्मों को जानें। उन्हें उपयोग में लाकर सुखी हों॥

शतंवो अम्ब धामानि सहस्रमुत वोरुहः ।
अधा शतक्रत्वो यूयमिमं मे अगदंकृत ॥

यजु० १२ अ० ७६ मन्त्र

शब्दार्थ-हे मातः तुम्हारे सैकड़ों उत्पत्ति स्थान हैं और हज़ारों अङ्कुर हैं। सो हे सैकड़ों कार्यों को पूर्ण करने वाली तुम मेरे इस शरीर को स्वस्थ करो।

भावार्थ-परमात्मा ने अनेक स्थानों में अनेक प्रकार से उगने वाली औषधियां हमारी रक्षा के लिये उत्पन्न की हैं। उन में अनेक कार्यों को सिद्ध करने की शक्तियां हैं। उन को हम उपयोग में लाकर शरीर को स्वस्थ रक्खें तथा उन का उपकार मानें।

ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्व इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

यजु० अ० ७७ । १२

शब्दार्थ-सोमलता आदि औषधियां प्रफुल्लित हों उन पर पुष्प लगें वे सुखप्रद हों। अश्वों के समान शीघ्र जीतने वाले वीरुध दुःखों से पार करने वाले हों।

भावार्थ-हे परमेश्वर हमारे दुःखों को मिटाने वाली शरीर में प्रवेशकर शीघ्र फल दिखाने वाली सोमादि वनस्पतियां हमारे देश में अधिक उगें और फूलें फलें परिपक्व वीर्य वाली हों जिस से हम दुःख रूपी समुद्र से पार होते रहें। देश में सर्वदा सुख शान्ति विराजे।

ओषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरुपब्रुवे ।
सनेयमश्वंगांवास आत्मानं तव पूरुष ॥
यजु० १२-७८

शब्दार्थ-औषधियां माताओं के समान हैं इस से तुमको देवी कहते हैं । सो तेरा भक्त मैं घोड़ा गाय आदि पशु वस्त्र और श्रेष्ठ ज्ञानको प्राप्त करूं ।

भावार्थ-माताकी रक्षा करना प्रसिद्ध है । जो औषधियां हमारे जीवन की रक्षा करती हैं अमित आयु प्रदान करती हैं वे भी हमारी माता के समान हैं वे दिव्य गुणों से युक्त होने से देवी कहाती हैं जिस प्रकार माता अपने पुत्रों को धन धान्य, पशु, ज्ञान, आदि से युक्त करने का उद्योग करती है वसे औषधियां भी हमको स्वस्थ बनाती हैं । जिस से हम परिश्रम कर अश्व गौ आदि पशु, वस्त्र आदि सामग्रियों का सचय करते हैं । तथा श्रेष्ठ ज्ञान सम्पादन कर उभय लोक में सुख पाते हैं ऐसी ओषधियों का सदैव उपकार माने और परमेश्वर को धन्यवाद देवें ।

यत्रौषधीःसमग्मत राजानः समिताविव ।
विप्रः सउच्यतेभिषग्रक्षोहामीवचातनः ॥
यजु० १२ । ८०

शब्दार्थ-राजसभा में राजा जिस प्रकार तेजयुक्त विराजते हैं उस प्रकार जिस के गृहमें औषधियां उपस्थित रहती हैं वह विप्र दुष्टों का और रोगोंका नाश करने वाला वैद्य नाम से कहा जाता है ।

भावार्थ-जिसके यहां प्रभावशालिनी ओषधियां नहीं हैं वह पढ़ा लिखा होने पर भी वैद्य कहाने योग्य नहीं है। शस्त्र और सामग्री रहित वीर योद्धा खाली हाथ, क्या युद्ध कर सकता है। वैद्यों का कर्त्तव्य है कि दुर्लभ्य दीप्तमान औषधियों को मंगाकर अपने औषधालयों में यथा योग्य स्थानों पर रक्खें जिससे वे अनेक रोगोंको नाश करनेमें समर्थ हों।

यस्यौषधीः प्रसर्पथाङ्गमङ्गं परुष्परुः ।
ततोयक्ष्मं विबाधध्वउग्रोमध्यमशीरिव॥यजु१२-८६

शब्दार्थ-जिस पुरुष के अंग २ और संधि २ में यह औषधियां प्रवेश करती हैं। उसके शरीर से यक्ष्मा रोग इस प्रकार नष्ट होजाता है जैसे प्रचण्ड वेगवाली वायु से मेघ।

भावार्थ-अनेक औषधियाँ मनुष्यों के सम्पूर्ण शरीर में तत्काल व्याप्त होजाती हैं जिनसे बड़े२ कठिन रोग दूर होते हैं। अथर्ववेद में इसही मन्त्र के द्वारा आञ्जन मणि को यक्ष्मारोग नाशक बतलाया है:—

नक्तं जातास्योषधे रामे कृष्णे असिक्निच ।
इदं रजनि रजय किलासं पलितं च यत् ॥

अथर्व० प्रथम काण्ड सूक्त० २३-१ मन्त्र

शब्दार्थ-हे रात्रिमें उत्पन्न हुई, हरिद्रे (दारु हल्दी) रामे (भृंगराज) कृष्णे (इन्द्रायण) असिक्नि (नीली) रंगने वाली औषधियां इस किलासकुष्ठ (श्वेतकुष्ठ) और पलित रोग को रंगदे।

भावार्थ-इन औषधियोंको पीसकर श्वेतकुष्ठ और सफेद बालों पर लेप करे श्वेतकुष्ठ को पहले आरने कण्डे से इतना रिगड़े कि रक्त चमकने लगे तब लेप करे। पलित रोग नाशार्थ बालों को कटवाकर पीछे लेप करे। सायण भाष्य में लिखा है कि अथर्व वेद के इस तेईसवें और चौबीसवें सूक्त का पाठ करता हुआ औषधियों को पीसे फिर लेप करे।

आसुरी चक्रे प्रथमेदं किलास भेषजमिदं किलासनाशनम्। अनीनशत् किलासं सरूपामकरत्त्वचम्॥ १-५-२४

शब्दार्थ-कुष्ठ चिकित्सकों में सबसे प्रथम आसुरी नाम स्त्री ने इस श्वेतकुष्ठ निवारिणी औषधि को बताया, और उससे श्वेतकुष्ठ दूर किया त्वचा को पूर्ववत् ठीक कर दिया।

भावार्थ--सूक्त के अन्य मन्त्रों में लिखा है कि सुपर्ण (गरुड़) को जीतकर उससे इस विद्याको आसुरी ने सीखा पहले समयमें स्त्रियां भी कुष्टके समान कुत्सित रोगोंकी चिकित्सा करती थीं असुर भी चिकित्सा कार्य्य में दक्ष थे। तथा एक २ औषधि के लिये युद्ध तक होजाता था।

सरूपा नाम ते माता सरूपो नाम ते पिता। सरूपकृत्त्वमोषधे सा सरूपमिदं कृधि॥

अथर्व १-२४-३

शब्दार्थ-हे औषधि तेरे माता पिता तेरे समान ही कृष्ण वर्ण वाले हैं। और तू दूसरे को भी अपने समान वर्ण क-

रने वाली है। इससे इस श्वेत कुष्ठ दूषित अङ्ग को अपने समान कृष्णवर्ण वाला कर।

भावार्थ-द्यौः पिता, पृथिवी माता., औषधियों का आकाश पिता और पृथिवी माता है ये दोनों कृष्ण वर्ण वाले होते हैं। ये औषधियां रात्रिमें उत्पन्न होती हैं जिससे इन कुष्ठ-नाशिनी औषधियोंमें सोमका गुण विशेष होता है इससे इन में त्वचाको कृष्णवर्ण करने की शक्ति होती है।

सहमानेयं प्रथमा पृश्निपर्ण्यजायत।
तयाहं दुर्णाम्नां शिरो वृश्चामि शकुनेरिव॥

२ ४-२५-२

शब्दार्थ-अनेक रोगों को सहन वाली औषधियोंमें प्रधान पृश्निपर्णी उत्पन्न हुई। उसके द्वारा दुर्नामों (अर्श, दाद, बिसर्प, श्वेत कुष्ठादि)का शिर श्येन पक्षीके समान काटताहूं।

भावार्थ-इन रोगों में सूक्तको पढ़ते हुए पृश्निपर्णीका लेप करना अत्यन्त लाभदायक है।

पाटामिन्द्रो व्याश्नादसुरेभ्यस्तरीतवे।

अथर्व २-५-२७-४

इन्द्रोह चक्रे त्वा बाहावसुरेभ्यस्तरीतवे।

अथर्व २-५-२७-३

शब्दार्थ-असुरों को जीतने के लिये इन्द्रने पाठा औषधि को खाया असुरोंको जीतने के लिये इन्द्रने पाठा औषधि को भुजामें बांधा।

भावार्थ-अथर्व वेदके इस सूक्तमें पाठा नामक ओषधिकी बड़ी प्रशंसा की गई है। इस सूक्तको जपता हुआ पाठाको दक्षिण भुजा में बांधे अथवा खावे तो शत्रुओं को जीतने में समर्थ हो शत्रु उसके सामने बोल न सके। कलियुग में ओषधियां हीन वीर्य्य वाली होजाती हैं। पहले समय में इनमें अचिन्त्य गुण थे। मणि मन्त्र ओषधियों की अचिन्त्य शक्तियों से बड़े २ कार्य्य सिद्ध होते थ। इस सूक्त में कहा है कि पाठा ओषधि को पहले गरुड़ने पहचाना और उसके विषनाशक गुणका अनुभव किया। आदि बाराह ने नासिका से उखाड़ा अर्थात् लोकोपकारार्थ संसार में प्रकट किया "सुपर्णस्त्वान्वविन्दत् सूकरस्त्वाखनन्नसा„ ऐसा मन्त्र लिखा है।

यो गिरिष्वजायथा वीरुधां बलवत्तमः।
कुष्ठेहि तक्मनाशन तक्मानं नाशयन्नितः॥

५-१-४-१ अथर्व

सुपर्णसुवने गिरौ जातं हिमवतस्परि।
धनैरभि श्रुत्वा यन्ति विदुर्हि तक्मनाशनम्॥

५-१-४-२

उत्तमोनाम कुष्ठास्युत्तमोनामतेपिता।
यक्ष्मंचसर्वंनाशय तक्मानंचारसंकृधि ॥५-१-४-८

शब्दार्थ-वीरुधोंमें बलशाली जो पर्वतोंमें उत्पन्न होता है ऐसा हे रोगनाशक कूठ! ज्वरको नाश करता हुआ यहां प्राप्त

हो ॥ १ ॥ हे कूठ तू हिमालय पर्वत पर अच्छे २ वृक्षों वाले बन में उत्पन्न हुआ है वहां से धनिक तेरे गुणों को सुन तुझे लाते हैं । और तेरे ज्वरनाशक गुणोंकी परीक्षा करते हैं ॥२॥ हे कूठ तू उत्तम नाम वाला है तेरा पिता हिमालय भी उत्तम है इससे सम्पूर्ण रोगों को दूर कर और ज्वर नाश कर ॥३॥

भावार्थ–इस सूक्त के प्रयोग विधि में लिखा गया है कि राजयक्ष्मा और कुष्टादि रोगोंके नाशार्थ कूठको पीसकर नव-नीत मिलावें और इस सूक्त को पढ़के रोगीके शरीरसे मले । यह औषधि बलदायक है । जहां पर यह उत्पन्न होता है उस हिमालय पर अनेक ओषधियां उगती हैं पहले समयमें धनिक ऐसी ओषधियों को मंगाते थे स्वर्ग में देवता इस कूठ को अ-मृत के समान समझकर पान करते थे (तत्रामृतस्य चक्षणं देवाः कुष्ठमवन्वत,, तत्रामृतस्य पुष्पं देवाः कुष्ठमवन्वत,, इत्यादि) इन सूक्तों को देखने और मनन करने से बड़ा आ-नन्द प्राप्त होता है । जैसे वर्त्तमान समय में किसी पुरुष से स्तुति में कहते हैं कि आपके पिता बड़े यशस्वी हैं । आपके भाई कैसे दानशील हैं माता कैसी गुणशालिनी है आपकी ब-हिन तो बड़ी सुशीला है । आपकी वाणी अमृत समान मीठी है इस ही शैली से वेदों में अनेक ओषधियों से प्रार्थनाकी गई है जो कि हमारे वेदवित् पाठकों को अवश्य पढ़नी चाहिये ।

रोहण्यसि रोहण्यस्थ्नश्छिन्नस्य रोहणी ।

रोहयेदमरुन्धति । ४–३–१२–१

यत्ते रिष्टं यत्ते द्युतमस्ति पेष्ट्रन्त आत्मनि
धाता तद् भद्रया पुनः संदधत् परुषापरुः।
४—३—१२—२ अथर्व

भद्रात् प्लक्षान्निस्तिष्ठस्यश्वत्थात् खदिराद्धवात्।
भद्रान्न्यग्रोधात्पर्णात् सा न एह्यरुन्धति॥
५—१—५—५

शब्दार्थ—हे लोहित वर्ण लाक्षे। तू रोहणी है। तू कटी हुई हड्डी को जोड़ने वाली है। तू शस्त्र से छिन्न अङ्ग से बहते हुए रुधिर को बन्द करने वाली है। सो इस रोगी के बहते रुधिर को बन्द कर॥१॥ हे शस्त्रसे कटे हुये वीर! तेरे शरीर में कटेहुये या जले हुए, या टूटे हुए जो अङ्ग हैं उन्हें परमेश्वर इस लाक्षा ओषधि से पुनः जोड़े और सन्धियोंको ठीक करे॥२॥

हे लाख! पवित्र पिलखन, पीपर, खैर, धाय, बड़, ढाक इन वृक्षों से हमको प्राप्त हो।

भावार्थ-इस सूक्तमें तथा पञ्चम काण्ड के पांचवें सूक्तमें लिखा है कि शस्त्र संघात पुरुष के रुधिर को एक दम बन्द करने के लिये लाख को दूध में औटा कर पिलाना चाहिये। दूध पिलाते समय सूक्तों का पाठ करता जावे। पिलखन पीपल आदि पवित्र वृक्षोंसे लाख लेनी चाहिये इन वृक्षोंमें बहते हुए रुधिर को रोकने की सामर्थ्य है, लाखमें रुधिर बन्द करनेकी बड़ी शक्ति है। हमने रक्तपित्त और क्षतरोगके रोगियों को इसे पिलाकर अनुभव किया है।

देवी देव्यामधि जाता पृथिव्यामस्योषधे ।
तांत्वानितत्नि केशेभ्यो दृंहणायखनामसि ॥

अथर्व-६-१३-१४६

यां जमदग्निरखनद्दुहित्रेकेशवर्धनीम् ।
तां वीतहव्य आभरदसितस्य गृहेभ्यः ॥

अथर्व-६-१३-१३६

अभीशुनामेया आसन्व्यामेनानुमेयाः
केशानडाइववर्धन्तां शीर्ष्णस्तेअसिताःपरि ।

शब्दार्थ-हे दिव्य पृथिवी में उत्पन्न हुई दिव्य गुणों वाली ओषधे (काकमाची भृङ्गराज प्रभृति) हे फैलनेवाली ओषधे तुझे केशों को दृढ करने के लिये उखाड़ता हूं । जिस केश बढ़ाने वाली ओषधि को जमदग्नि ने अपनी पुत्री के लिये उखाड़ा, उसको वीतहव्य असित के घरों से लाया ॥ २ ॥ इस ओषधि के प्रभाव से केश जो पहले एक२ बालिस्त या एक २ हाथ से नापे जाने वाले थे वे नरसल के समान लम्बे और शिर के ऊपर काले २ घने बाल उगे ।

भावार्थ-इन मन्त्रोंसे पता चलता है कि पहिले ऋषिलोग भी अपनी पुत्रियों के केश कल्प करते थे तथा आजके समान लम्बे बालों को पसन्द करते थे ।
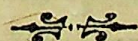
वेदोंमें रोग वर्णन।

अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि ।
यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामिते ॥१
ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात् ।
यक्ष्मं दोषण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां विवृहामिते ॥२॥
हृदयात्ते परिक्लोम्नो हलीक्ष्णात् पार्श्वाभ्याम् ।
यक्ष्मं मतस्नाभ्यां प्लीन्हो यक्नस्ते विवृहामसि॥३
आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोरुदरादधि ।
यक्ष्मं कुक्षिभ्यां प्लाशेर्नाभ्या विवृहामिते ॥ ४ ॥
उरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् ।
यक्ष्मं भसद्यं श्रोणिभ्यां भासदं भंससो विवृहामिते५
अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः स्नावभ्यो धमनिभ्यः ।
यक्ष्मंपाणिभ्यामङ्गुलिभ्यो नखेभ्यो विवृहामिते ॥६
अङ्गे अङ्गे लोम्नि लोम्नि यस्ते पर्वणि पर्वणि ।
यक्ष्मं त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य वीवर्हेणविश्वञ्च
वि वृहामसि ॥ ७ ॥ अथर्व० २-६-३३

शब्दार्थ-मैं इस कश्यप के सूत्र से, तेरे नेत्र, नासिका, कान और ठोड़ी से रोगोंको दूर करता हूं । तथा शिर और मस्तिष्क (दिमाग) सम्बन्धी रोगों का नाश करता हूं ॥१॥

ग्रीवा, धमनी, कीकसा (जत्रु और वक्षस्थल में रहने वाली) अस्थि अनूक्य (सन्धि) कन्धे बाहु, इन्हों से तथा वातादि दोष सम्बन्धी रोगों को दूर करता हूं ॥ २ ॥ हृदय, परिक्लोम, (हृदय के समीपवर्ती मांस पिण्ड) हलीक्ष्ण (मांस पिण्ड विशेष) वृक्क (गुरदा) पसवाड़े, तिल्ली, यकृत् (जिगर) इन अङ्गों से रोगोंको दूर करता हूं ॥ ३ ॥ अन्तड़िया, गुदा मोटी अन्तड़िया, उदर, कुक्षि, प्लाशि (बहुत छिद्रोंवाला मलयन्त्र) नाभि इनसे रोगों को हरता हूं ॥ ४ ॥ ऊरु, जानु, एड़ी, पांव कमर इनसे रोगों को जुदा करता हूं, तथा कमर में होनेवाले तथा भासमान गुप्त स्थान में होने वाले रोगों को पृथक् करता हूं ॥५॥ हड्डी, मज्जा स्नायु, धमनी, हाथ अंगुलियां नख इनसे रोगों को दूर करता हूं ॥ ६ ॥ अंग २ रोम रोम, सन्धि सन्धि और त्वचा में होने वाले रोग तथा अन्य सम्पूर्ण रोगों को दूर करता हूं ॥

भावार्थ-इस सूक्त में शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग और धातुओं का वर्णन है। आयुर्वेदीय ग्रंथों में लिखा है कि "सप्रकुपितो दोषः समुत्थान विशेषतः। स्थानान्तरगतश्चैव जनयत्यामयान्बहून्" अर्थात् वातादि कोई दोष भिन्न २ कारणों से शरीर के भिन्न २ स्थानों में प्राप्त होके अनेक रोगों को उत्पन्न करते हैं। इस सूक्तमें भी यह ही वर्णन किया है कि शरीर के प्रत्येक अंग प्रत्यंग में रोग उत्पन्न होते हैं। और उन की संख्या निश्चित नहीं है चार छः शब्दोंको छोड़ शेष ये वैदिक शब्द आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भी व्यवहार किये गये हैं ॥

मुञ्च शीर्षक्त्या उत कास एनं परुष्परुरा-विवेशा यो अस्य । यो अभ्रजा वातजा यश्च शुष्मो वनस्पतीन्सचतां पर्वतांश्च ॥अथर्व० १-३-१२-३

शब्दार्थ-हे सूर्य इस रोगीको शिर रोग से छुड़ा और यह कास (खांसी) इस रोगीके सन्धि बन्धनों में प्रवेश कर गया है (शरीर को शिथिल करता है) उससे छुड़ा जो कफ वायु और पित्त से उत्पन्न होने वाले रोग हैं वे इस रोगी को छोड़ बनस्पति और पहाड़ों में प्रवेश कर जावें ॥

भा०-इस मन्त्र में कास और शिर रोग का वर्णन है यह भी कहा गया है कि खांसी सम्पूर्ण शरीर को दुर्वल करती है और सम्पूर्ण रोग वातादि तीनों दोषों से उत्पन्न होते हैं ॥

अनु सूर्यमुदयतां हृद्योतो हरिमा च ते । गो रोहितस्य वर्णेन तेनत्वा परिदध्मसि १-५-२२-१

शब्दार्थ-हे रोगी (हृद्योतः) हृदय रोग और (हरिमा) हरियाई अस्त हुए सूर्य्य के साथ चली जावे अर्थात् नष्ट हो जावे लाल गौ के समान तेरा वर्ण हो ।

भावार्थ-इस मन्त्र में हृदय रोग, पाण्डु, कामला, आदि रोगों का वर्णन है ।

नमः शीताय तक्मने नमो रूराय शोचिषे कृणोमि । यो अन्येद्यु रुभयद्युरभ्येति तृतीयकाय नमो अस्तु तक्मने ॥ १-५-२५-४

शब्दार्थ-शीत ज्वर, शीतज्वर का भेद रूर ज्वर, तथा अन्येद्युः द्वाहिक, तृतीयक, चातुर्थिकादि भेद हैं उनके लिये नमस्कार करता हूं।

भा०-आयुर्वेदीय ग्रंथोंमें भी शीत ज्वरके अन्येद्युः आदि भेद कहे हैं किन्तु रूर ज्वर देखने में नहीं आया।

इन्द्रस्य या मही दृषत् क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी। तया पिनष्मि सं क्रिमीन् दृषदा खल्वां इव ॥१॥

दृष्टमदृष्टमतृहम् अथोकुरूरमतृहम्। अल्गण्डून्त्सर्वाञ्छलुनाञ्क्रिमीन्वचसाजम्भयामसि ॥

अन्वान्त्र्यं शीर्षण्य १ मथो पार्ष्टेयं क्रिमिम्। अवस्कवं व्यध्वरंक्रिमीन्वचसाजम्भयामसि ॥अथ०

शब्दार्थ-सम्पूर्ण कृमियों का नाश करने वाली जो इन्द्र की बड़ी सिल है उस से कृमियों को इस प्रकार पीसता हूं जैसे पत्थर से चने ॥ १ ॥ जो कृमि देखने में आती हैं, और जो बारीक होनेसे नहीं देखी जातीं, उनका मैं नाश करता हूं ॥ २ ॥ अन्तड़ियां, शिर, और पीठ में रहने वाली कृमियों का नाश करता हूं (अवस्कवम्) जो चल बोल न सकें (व्यध्वरम्) अनेक मार्गों में जाने वाले कृमियों को इस मन्त्र से नाश करता हूं ॥

भावार्थ-वेदों में कृमियों का वर्णन होने से यह जाना जाता है कि आयुर्वेदीय चिकित्सक कीटाणु कल्पना को प्राचीन काल से जानते थे ॥

इमं मे अग्ने पुरुषं मुमुग्ध्ययं यो बद्धः सुयतो लालपीति । अतोऽधि ते कृणवद् भागधेयं यदानुन्मदितोऽसति ॥ अ० ६-११-१११-१

अग्निष्टे निशमयतु यदिते मन उद्युतम् ।
कृणोमि विद्वान् भेषजं यथानुन्मदितोऽससि॥२॥
देवैनसादुन्मदितमुन्मत्तं रक्षसस्परि ।
कृणोमि विद्वान् भेषजं यथानुन्मदितोऽससि॥३॥
पुनस्त्वारदुप्सरसः पुनरिन्द्रः पुनर्भगः ।
पुनस्त्वादुर्विश्वेदेवा यथानुन्मदितोऽससि ॥४॥

शब्दार्थ—हे अग्ने! मेरे इस पुरुषको उन्माद रोगसे छुड़ा, जो यह पुरुष रोग के वशीभूत हो अधिक प्रलाप करता है वह तेरे लिये अधिक हव्य प्रदान करे जिस से उन्माद रहित हो ॥ १॥ हे गन्धर्व गृहीत रोगी ? अग्नि देव तुझे शान्ति दें । तेरा मन जो उन्मत्त हो रहा है, मैं प्रतीकार जानने वाला उस की चिकित्सा करता हूं जिस से तू उन्माद रहित हो ॥ २ ॥ किसी देवता के अपराध करने से या राक्षस के वशीभूत होने से जो तू उन्माद रोग से पीड़ित है मैं प्रतीकार जानने वाला उस की चिकित्सा करता हूं जिस से उन्माद रहित हो । हे रोगी तुझे अप्सराओं ने, फिर इन्द्र ने, फिर भग देवता ने, फिर सम्पूर्ण देवताओं ने उन्माद रहित करके हम को दिया ।

भावार्थ—इन मन्त्रों में उन्माद रोग का वर्णन है, आयुर्वेदीय ग्रन्थों में जब हम ने उन्माद रोग के वर्णन में यह पढ़ा था कि उन्माद रोग देव ग्रह और असुर ग्रहों के शरीर में प्रवेश करने से होता है, तब चित्तमें ऐसा सन्देह हुआ कि यह मत आधुनिक है। किन्तु इन मन्त्रों के देखने से जिन में स्पष्ट देव ग्रह, असुर और अप्सराओं से उन्माद का उत्पन्न होना लिखा है चित्त में यह विश्वास होता है कि भूतविद्या का पहले समय में प्रचार था, और देव, असुर आदि विशेष योनि वाले हैं। तैत्तिरीय संहिता में लिखा है कि-

गन्धर्वाप्सरसो वा एतम् उन्मादयन्ति ।

ऐसे विषयों पर विद्वान् लोगों को निष्पक्ष हो कर लेखनी उठानी चाहिये, खींचातानी करके अर्थको पलटना न चाहिये।

विद्रधस्य बलासस्य लोहितस्य वनस्पते
विसल्यकस्यौषधे मोच्छिषः पिशितंचन ॥१॥
यौ ते बलास तिष्ठतः कक्षे मुष्कावपश्रितौ ।
वेदाहं तस्य भेषजं चीपुद्रुरभिचक्षणम् ॥ २ ॥
यो अङ्ग्योयः कर्ण्यो यो अक्ष्योर्विसल्यकः ।
विवृहामो विसल्यकं विद्रधं हृदयामयम् ॥३॥

शब्दार्थ-हे वनस्पते! हे ओषधे! विद्रधि, बलास, लोहित बिसर्प इन रोगों के आश्रय भूत दुष्ट मांस को शुद्धकर। हे बलास [कफ] तेरे जो बिसर्पादि रूपी बिकार कांख और

अण्डकोशोंमें विद्यमान हैं उसको निवृत्त करने वाली "शीपद्रु" वृक्ष विशेष नाम वाली ओषधिको जानता हूं, जो विसर्प हस्त पादादि, अङ्ग कर्ण या आंखमें स्थित हैं उसको मैं नाश करता हूं। तथा हृदय रोग और विद्रधि को नष्ट करता हूं।

भा०-इन मन्त्रों में विसर्प विद्रधि हृदय रोगों का वर्णन है। इन रोगों में त्वचा मांस रक्त आदि धातु बिगड़ते हैं। तथा हस्त पादादि अंगोंमें ये उत्पन्न होते हैं।

या ग्रैव्या अपचितोथो या उपपक्ष्याः ।

विजाम्नि या अपचितः स्वयंस्रसः।२।अ०७-७-७६-२

शब्दार्थ-ग्रीवा कांख के समीपी स्थान, जंघा इनमें उत्पन्न हुआ जो विना पका गलगण्ड या ग्रंथिया हैं वे सब स्वयं फूट जावें।

यः कीकसाः प्रशृणाति तलीद्यमवतिष्ठति

निरास्तं सर्वं जायान्यं यः कश्च ककुदि श्रितः॥

अथर्व ७-७-७६—३

शब्दार्थ-जो राजयक्ष्मा, अस्थियों में प्रवेश करता है, जो मांस में ठहरता है जो दुःसाध्य रोग ग्रीवा में स्थित होता है उस स्त्री संग से होने वाले क्षय रोग को दूर करो।

भा०-राजयक्ष्मा रोग में धातुशोष होता है, क्रमशः रक्त-मांस घटने लगते हैं ग्रीवा पतली हो जाती है, यह रोग स्त्री संगके अधिक करनेसे होता है। राजयक्ष्मा का भेद व्यवाय शोष आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भी लिखा है॥

वेदों में अग्नि वर्णन।

ये अग्नयो अप्स्वन्तर्ये वृत्रे ये पुरुषे ये अश्मसु।
यआविवेशोषधीर्यो वनस्पतींस्तेभ्योअग्निभ्यो
हुतमस्त्वेतत् ॥ १॥ यः सोमेअन्तर्यो गोष्वन्तर्य
आविष्टोवयःसु यो मृगेषु। य आविवेश द्विपदो
यश्चतुष्पदस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतमस्त्वेतत् ॥ २॥
दिवं पृथिवी मन्वन्तरिक्षं ये विद्युतमनुसंचरन्ति।
ये दिक्ष्वन्तर्ये वाते अन्तस्तेभ्यो अग्निभ्यो हुतम-
स्त्वेतत् ॥ ३ ॥ अथर्व० ३-५-२१-

शब्दार्थ–जो अग्नियां जल में व्यापक हैं, जो मेघ में जो पुरुष में पत्थरों में विद्यमान हैं, जो ओषधियां और वनस्पतियों में प्रविष्ट है उनके लिये यह हुत है ॥ १ ॥

जो सोमलता में, जो पशुओं में, जो पक्षियों में जो वनवासी मृगादिकों में व्यापक है जो मनुष्यों और पशुओं में विद्यमान है उनके लिये यह हुत है। जो अग्नियां स्वर्ग पृथ्वी और आकाश में रहती हैं, जो बिजली में रहती हैं। जो दिशाओं में जो वायु में प्रविष्ट हैं उनके लिये यह हुत है॥

भा०-आयुर्वेद शास्त्र में लिखा है कि यह संसार अग्नि और सोमात्मक है। संसार के सब पदार्थों में न्यून या अधि-कांश से अग्नि व्याप्त है। अग्नि को छोड़ अन्य चार तत्त्वों में भी यह पञ्चीकरण के नियमानुसार प्रविष्ट है जलमें रहनेवाले अग्नि को बड़वानल कहते हैं। मेघों में जो बिजली चमकती है वह अग्नि का भाग है, सूर्य्यकान्तादि मणियों के प्रकाश से अग्नि जल उठता है। ओषधियों में रहने वाला अग्नि पचाने का काम करता है। पशुओं में और पुरुषों में जठराग्नि व्याप्त है भगवद् गीता में लिखा है कि—

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥

अर्थात् मैं वैश्वानर होकर मनुष्यों के देहमें रहता हूं और प्राण अपानवायु से युक्त होकर चार प्रकार के भोजन को पचाता हूं। इसही वेदमें अन्यत्र लिखा है "विश्वम्भर विश्वेन भरसा पाहि स्वाहा २-३-१७-५" अर्थात् हे जठराग्ने! अपनी सम्पूर्ण पोषण शक्तिसे मेरी रक्षा कर। वैद्यक शास्त्र में इसही अग्नितत्त्व को पित्त दोष माना है और जठराग्नि के द्वारा र-सादि धातुओंके उत्पन्न होनेसे शरीर का पोषण होना लिखा है। अथर्ववेद के इस सूक्तमें तथा अन्यत्र अनेक स्थानों पर अग्नि का वर्णन है जो मनुष्य कहते हैं कि वेदों में विज्ञान नहीं है उनको ऐसे स्थलों को ध्यान पूर्वक पढ़ना और मनन करना चाहिये।

वेदों में जलका वर्णन ।

यदग्निरापोऽदहत् प्रविश्ययत्राकृण्वन् धर्म-धृतो नमांसि । तत्र त आहुः परमं जनित्रं सनः संविद्वान् परिवृङ्ग्धि तक्मन् ॥ १-५-२५ १

शब्दार्थ-जो अग्नि जल में प्रवेश करके उसे जलाता है जिस में हवन करता हुआ धर्मात्मा यजमान नमस्कार करता है। हे तक्मन् (ज्वर) उस अग्नि को तेरा परम उत्पन्न करने वाला कहते हैं इसे जानकर हमारे शरीर से दूर हो जा ।

भावार्थ-सायणाचार्य ने इस सूक्त के आदि में लिखा है कि लोहे के कुठार को अग्नि में गरम करके पानी में बुझावे और उससे शीतज्वर के रोगी का सूक्त पढ़ते हुए सिंचन करे शीतज्वर की इस ही से मिलती जुलती चिकित्सा आज भी की जाती है इसे विदेशी डाक्टर अपनी आविष्कार की हुई बताते हैं । ज्वर से संतप्त रोगी के शरीर पर गरम पानी से डूबा हुआ कपड़ा लपेट कर ऊपर से कम्बल उढ़ादिया जाता है जिससे ज्वर उतर जाता है। इस मन्त्र में कैसा उत्तम भाव है इसे ध्यान पूर्वक विचारना चाहिये । मन्त्र में कहा है कि हे ज्वर तेरा परम उत्पन्न करने वाला अग्नि है। यह ही बात आत्रेय ऋषि ने चरक संहिता में भी लिखी है।

अस्ति शीतसाध्यो धातुर्ज्वरकरः,, अर्थात् शीतल वस्तुओं से शान्त होने वाली अर्थात् आग्नेयधातु ज्वर उत्पन्न करती है,,

जो अग्नि इस गरम किये कुठार द्वारा पहुंच गई है इससे यह शारीरिक अग्नि मिल जावे । भाव यह है कि जल में व्याप्त अग्नि रोगी के शरीर में संताप करने वाली अग्नि को खींचती है क्योंकि वह जल युक्त है इस मन्त्र से यह भी तात्पर्य निकलता है कि गरम पानी पीने से ज्वर छूटता है। इस मन्त्र में जल चिकित्सा का उपदेश है ॥

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम् ॥१,१,५,४अथर्व ॥

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निञ्च विश्व शम्भुवम् ॥ आपः पृणीत भेषजं वरूथंतन्वे ३ मम १ ।१।६ । २ शं न आपो धन्वन्याः ३। शमु सन्त्वनूप्याः १।१।६ । शंनः खनित्रिमा आपः शमु याः कुम्भ आभृताः । शिवानः सन्तु वार्षिकीः । १, १, ६, ४ ॥

शब्दार्थ-जल में अमृत है जलमें औषधि है ॥ १ ॥ सोमने कहा जल में सम्पूर्ण औषधियां हैं ॥ २ ॥ हे जल तुम मेरे शरीर में रोग निवर्तक औषधि रूप प्राप्त हो ॥ ३ ॥ हमको मरुभूमि, तथा अनूपदेश का जल सुखकारी हो, कूप का जल घड़ेमें भरा जल सुखकारी हो, वर्षा का जल कल्याण देवे ।

भावार्थ-जल प्राणिओं का जीवन होने से अमृतमय है, आयुर्वेदीय ग्रन्थों में लिखा है "जीविनां जीवनम् जीवो ज-

गत् सर्वर्त्तुतन्मयम्" अर्थात् प्राणिओं का प्राण जल है सम्पूर्ण संसार जलमय हैं । जल से (वृष्टिद्वारा) सम्पूर्ण ओषधियां उत्पन्न होती हैं तथा जल में सम्पूर्ण ओषधियां विद्यमान हैं अर्थात् अनेक ओषधियां क्वाथ अरिष्ट आसवादि जलके द्वारा बनाई जाती हैं । जल चिकित्सा से अनेक रोग दूर होते हैं । आश्रय भेद से जल में अनेक गुण होते हैं अनूपदेश के और मरुभूमि के जल के गुणों में अन्तर है इस ही प्रकार कूप, कुम्भ, और वर्षा के जलों में भी भिन्न २ गुण हैं जिनका आयुर्वेदीय ग्रन्थों में सविस्तार वर्णन है । इन जलों को यथोचित रीति से कार्य में लावे ।

हिमवतः प्रस्रवन्ति सिन्धौसमहसंगमः ।

आपोहमह्यं तद्देवी र्ददन् हृदयोतभेषजम् ॥

शब्दार्थ—हिमालय से जल निकल कर (गंगादि नदियों द्वारा) समुद्रमें मिल जाता है । वह जल मुझे हृदयदाह निवर्तक ओषधि देवे अर्थात् ओषधि रूप होवे ।

भावार्थ—हिमालयसे अनेक नदियां निकल कर समुद्रमें मिलती हैं उनका जल शीतल होता है हृदय के दाहको दूर करता है॥
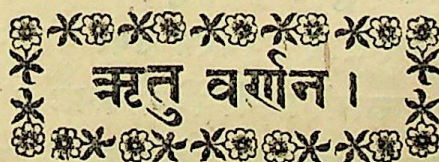
ग्रीष्मो हेमन्तः शिशिरो वसन्तः शरद्वर्षाः

स्विते नो दधात् । आनो गोषुभजता प्रजायां निवातइद्वः शरणेस्याम ॥

शब्दार्थ-ग्रीष्मादि ६ ऋतुयें हम को धनशाली बनावें । हे ऋतुओ ! तुम हमको पशुओंमें भाग युक्त करो । वायु भी न फटकै ऐसी तेरी शरण में हम सदैव रहैं ।

भावार्थ-ग्रीष्मादि ऋतुओं का यथोचित वर्ताव हो जिस से हम स्वस्थ रहें अन्नादि अच्छी प्रकार उत्पन्न हों जिस के व्यापार से हम धन पैदा करें । पशुओं का पालन होवे । हम निर्भय होकर जीवन व्यतीत करैं ।

वर्षा का वर्णन ।

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः । समभ्राणिवातजूतानियन्तु । मह ऋषभस्य नदतो नभस्वतो, वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु ॥

समीक्षयन्तु तविषाः सुदानवोऽपांरसा ओषधीभिः सचन्ताम् । वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं पृथग् जायन्तामोषधयो विश्वरूपाः ॥

समीक्षयस्व गायतो नभांस्यपां वेगासः पृथगुद्विजन्ताम् । वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं

पृथग्जायन्तावीरुधो विश्वरूपाः ॥

अथ० ४-३-१५-१, २, ३

शब्दार्थ-दिशायें वायु से युक्त होकर (अर्थात् सब दिशाओं में पहले वायु भर जावे) मेघों से पूर्ण हो। जल से भरे मेघ वायु से प्रेरित हो कर व्याप्त हो जावें। डींग मारते हुए बड़े बैल के समान (वीर्यदान से पहले) नाद करते हुए मेघ की जल भरी वर्षा भूमि को तृप्त करें अर्थात् सींचै ॥ १॥ बड़े वेगयुक्त वायु वृष्टि का दर्शन करावें, जल का द्रव रस बोये हुए ओषधियों (जौ चांवल आदि) से मिले, वर्षा की धारा भूमि को सींचे जिस से नाना प्रकार की ओषधियां उत्पन्न हों ॥ २ ॥ वायुके गण, स्तुति करते हुए हमको मेघोंका दर्शन करावें, मेघोंका वेगयुक्त प्रवाह अलग २ चले (आकाश में मेघ दौड़े) वर्षा की धारा इत्यादि पूर्ववत् ॥ ३ ॥

भावार्थ-वर्षा होनेमें वायु मुख्य कारण है, हवाके द्वारा बादल एक जगहसे दूसरी जगह पहुंचाये जाते हैं। वर्षा होने से अनेक ओषधियां उत्पन्न होती हैं जिस से प्राणरक्षा होती है इस सूक्त में वर्षा का अलङ्कार युक्त वर्णन है जिस प्रकार कवि लोग करते हैं।

उदीरयत मरुतः समुद्रतस्त्वेषो अर्को नभ उत्पातयाथ । महऋषभस्य नदतो नभस्वतो वाश्रा आपः पृथिवीतर्पयन्तु ॥

अभिक्रन्दस्तनयार्दयोदधिं भूमिं पर्जन्य

पयसा समङ्ग्धि । त्वयासृष्टं बहुलमैतु वर्षमाशारैषी कृशगुरेत्वस्तम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ-हेमरुद्गण ! समुद्र से वृष्टि के अर्थ जल को ऊपर उठावो यह दीप्तमान सूर्य उस से बादलों को पैदा करे। डींग मारते हुए बड़े बैलके समान नाद करते मेघको जलभरी वर्षा पृथ्वी को सींचे ॥४॥ हे मेघ ! चारों तरफ़ से गर्ज, और जलको त्याग, समुद्रको पीड़ित कर (जल लेकर) जलयुक्त में तुझ मेघसे वर्साया हुआ जल भूमि को प्राप्त हो (आशारैषी) सूर्य्य तेजहीन होकर अस्त होजावे ॥ ५ ॥

भावार्थ-सूर्य्य अपनी किरणों द्वारा समुद्र से जल के परमाणुओं को भाफ बनाकर खींचता है। उनको परमाणुओं को वायु ही ऊपर ले जाता है, आकाश में उससे मेघको बरसानेवाले बादल बनाये जाते हैं ऐसे अनेक प्रमाण अन्यत्र भी पाये जाते हैं "आदित्याज्जायते वृष्टिः,, की ही इन मन्त्रों में सूचना है। आजकल के वैज्ञानिकोंका भी ऐसा सिद्धान्त है

सम्बत्सरं शशयाना ब्राह्मणा ब्रतचारिणः ।
वाचं पर्जन्य जिन्वितां प्रमण्डूका अवादिषुः ॥
उप प्रवद मण्डूकि वर्षमावदतादुरि ।
मध्ये ह्रदस्य प्लवस्व विगृह्य चतुरः पदः ॥

शब्दार्थ-एक वर्ष पर्य्यन्त वायु, आतप आदि से शुष्क हुए ब्रह्मचारी ब्राह्मणों के समान, मण्डूक, बादलों की ध्वनि को सुनकर बोलनेलगे। हे मण्डूकि, आवाज कर हे दादुरि वर्षा

को बुला, और बर्षा होने पर तालाब में पैर और चारों पैरों को फैला।

भावार्थ-यहां अलङ्कार युक्त वर्णन हैं। जब वर्षा होती है तब मण्डूकोंकी टर्र २ होने लगती है अनेक जीवजन्तु मीठे २ स्वरसे गान करते हैं यह मनमोहनी वर्षाका दृश्य सब प्राणियों को प्रसन्न करता है।

मृत्यु वर्णन।

एकशतं विष्कन्धानि विष्ठिता पृथिवीमनु।
तेषां त्वामग्र उज्जहरुर्मणिं विष्कन्धदूषणम्॥

शब्दार्थ-एक सौ एक मृत्यु रूप विघ्न इस पृथिवी पर हैं उनके नाशार्थ हे मणे तुझे देवताओं ने उखाड़ा।

भावार्थ-मृत्यु दो प्रकार की आयुर्वेदीय शास्त्रों में मानी जाती हैं नियत और अनियत (अकाल)। जो मृत्यु जरावस्था होने पर क्रमशः क्षीण होने से होवे वह नियत मृत्यु और यदि किसी रोग या आगन्तुक कारणोंसे होवे तौ वह अकाल मृत्यु कहलाती है एक सौ एक प्रकार की मृत्यु सुश्रुत में भी लिखी है "एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षते। तत्रैकः काल संयुक्तः शेषास्त्वागन्तुजाः स्मृता,,॥ अर्थात् अथर्ववेद के ज्ञाता एकसौ एक प्रकार की मृत्यु बतलाते हैं उन में एक नियत मृत्यु है और शेष आगन्तुज। यह श्लोक इस मन्त्र के भाव से समानता रखता है अकालमृत्यु यदि न मानी जावे

तो फिर चिकित्सा शास्त्र ही व्यर्थ होवे। चरक संहिता के विमान स्थानमें यह विषय बड़ी उत्तमरीतिसे वर्णन किया है।

वेदों में शारीरिक।

तिष्ठावरे तिष्ठ पर उतत्व तिष्ठ मध्यमे।
कनिष्ठिका च तिष्ठति तिष्ठादिद्धमनिर्मही॥

शब्दार्थ-हे अवरे (शरीर में नीचे जाने वाली नस) तू ठहर, हे ऊर्ध्वभाग गामिनी नस तू ठहर, हे मध्यभाग गामिनी नस तू ठहर। वारीक नस तू ठहरती हैं और मोटी नस ठहरे।

भावार्थ-ठहरने से तात्पर्य यह है कि रक्तस्राव रहित हो यह सूक्त भी क्षत होने से रक्त को बहाने वाली नसको रोकने के लिये है। इस से यह ज्ञात होता है कि रक्त वहाने वाली शिरायें ऊपर नीचे बीचमें फैलीहुई हैं तथा मोटी और पतलीहैं।

शतस्य धमनीनां सहस्रस्य हिराणाम्।
अस्थुरिन्मध्यमा इमाः साकमन्ता अरंसत॥

शब्दार्थ-एक शत धमनियों, और एक हजार शिराओं के बीच में, जो ये रक्त को बहाने वाली नाड़ियां है तथा अन्य नाड़ियां रुधिर स्राव न करके पूर्ववत् हो जावें।

भावार्थ-इस मन्त्र में शिराओं की संख्या का वर्णन है। स्थूल और सूक्ष्म भेदों से शिरा धमनी आदि की संख्या सब ग्रन्थों में समान नहीं है। मण्डूक उपनिषद्में लिखा है कि "शतं चैकाच्च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानम् अभिनिसृः-

तैका,, एक सौ एक हृदयमें प्रधान नाड़ियां हैं, उनमें से एक मूर्द्धा में है। शिरायें सूक्ष्मतासे तीन लाखसे भी अधिक मानी हैं यहां पर सहस्र शाखा नाड़ियों का ग्रहण हैं।

परिवः सिकतावती धनूर्बृहत्यक्रमीत्।
तिष्ठतेलयता सु कम् ॥ अथ० १-३-१७-४

शब्दार्थ—हे नाडियों? तुमको सिकतावाली नाड़ी (जिसमें पथरी पड़गई हो) धनुष के समान टेढा मूत्राशय, (नाडी विशेष) या मोटी नस, चारों ओर से रोकती हुई रहे। और सब नाडियां रुधिरस्राव रहित होकर रोगीको सुख उपजावें।

भावार्थ–किसी नाड़ीमें पथरी होजावे, या मूत्राशय टेढा हो जावे, या कोई नस फटजावे, तो वहांसे रुधिर निकलना प्रारम्भ हो जाता है, जिस से अन्य नसों के मार्ग रुकजाते हैं, और उनका रक्त भी उन फटी हुई नसोंसे निकलने लगता है।

वि ते भिनद्मि मेहनं वियोनिं वि गवीनिके।
वि मातरञ्च पुत्रञ्च वि कुमारं जरायुणाव जरायु पद्यताम् ॥ अथ० १-२।११।

शब्दार्थ-हे गर्भिणि! तेरे मूत्रद्वार, और योनिको विदीर्ण करता हूं। योनि में रहने वाली दो नाड़ियों को जो गर्भको रोकती हैं उन को भी विदीर्ण करता हूं माता और पुत्र को जुदा २ करता हूं। जरायु को विदीर्ण कर पुत्र को अलग करता हूं और ऐसा करने पर जरायु भी तेरे गर्भाशय से निकल जावे।

भावार्थ—इस मन्त्रमें शस्त्र क्रियाका कैसा अच्छा वर्णन है। जिस समय गर्भवतीका बालक उत्पन्न नहीं होता, जरायु में लिपट रहा है, या नसें रोक रही हैं या योनिका मार्ग छोटा है, या अन्य किसी प्रकार से बच्चा पैदा होने से रुका हुआ है उस समय वैद्य उसे शस्त्र क्रिया से उस रोकने वाले कारणको विदीर्ण कर बच्चा जनवाता है। और जरायु को भी बाहर निकालता है अब कहिये पाठक हमारे यहां शस्त्र चिकित्सा का कितने दिनोंसे प्रचार है क्या कोई बतला सकता है? यदि हम प्राचीन कालको पूर्ण उन्नत समझें तो क्यों मिथ्या समझा जावे ?।

यदान्त्रेषु गवीन्योर्यद्वस्तावधि संश्रितम् ।
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥

शब्दार्थ- जो तेरा मूत्र, आन्तोंमें, गवीनी नाम्नी दो नाडियों में, या वस्तिमें रुक गया है वह सब स्थानों से बल् बल् शब्द करता हुआ बाहर निकले।

भावार्थ--मूत्र पहले आंतों से पृथक् होता हुआ, गवीनी नामक दो नाडियों द्वारा मूत्राशय में प्राप्त होता है। और आज कल भी डाक्टर और हकीम गुर्दे से मूत्रको लाने वाली दो नाडियों को स्वीकार करते हैं। सुश्रुतमें भी धमनी प्रकरण में लिखा है"मूत्रवस्तिमभिप्रपन्ने मूत्रवहे द्वे,,अर्थात् मूत्राशय कोप्राप्त होनेवाले दो स्रोत।

प्रतेभिनद्मि मेहनं वर्त्रं वेशन्त्या इव
एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्बालिति सर्वकम् ॥

शब्दार्थ–हे मूत्रव्याधि पीडित रोगी, मैं तेरी शिश्नेन्द्रियको (लोहशलाका से) भेदन करताहूं। जैसे किसी तालाब से जल लानेकी उसकी नाली को खोदते हैं। ऐसा करने से तेरा रुका हुआ मूत्र चारों ओरसे (बल २) शब्द करताहुआ छूटे।

भावार्थ–इस मन्त्र से जाना जाता है कि पहिले समय में रुके हुए मूत्र को निकालने के लिये शलाका प्रयोग किया जाता था। वैद्य लोग शिश्नेन्द्रियमें सलाई डालकर मूत्रमार्ग को साफ करते थे।

त्रीणि च वै शतानि षष्टिश्च सम्वत्सरस्य रात्रय
स्त्रीणि च शतानि षष्टिश्च पुरुषस्यास्थीनि ॥

शतपथ १२–३२–३

शब्दार्थ–तीन सौ साठ ही एक वर्ष की रात्रियां होता हैं और तीन सौ साठ ही पुरुष के हड्डियां।

भावार्थ–वेदानुयायी, पुरुष के शरीर में ३६० अस्थियां मानते थे। चरकाचार्य्य ने भी शरीर स्थान में, तीन सा साठ अस्थियों को ही माना है। यथा "त्रीणि षष्ठ्यधिकानि-शतान्यस्थ्नां सहदन्तोलूखलनखैः,,। सुश्रुत में तो स्पष्ट कह भी दिया है कि "त्रीणिसषष्ठान्यस्थिशतानि वेदवादिनो भाषन्ते। शल्यंतन्त्रेतु त्रीण्येव शतानि अर्थात् वेदभाषी ३६० हड्डियां मानते हैं किन्तु शल्यतन्त्रोंमें तीनसौ ही मानी गई हैं।

सूर्यरश्मिचिकित्सा

ये अंगानि मदयन्ति यक्ष्मासो रोपणास्तव ।
यक्ष्माणां सर्वेषां विषं निरवोचमहं त्वत् ॥
पादाभ्यां ते जानुभ्यां श्रोणीभ्यां ते परिसंसः ।
अनूकावषर्णी रुहाभ्यः शीर्ष्णो रोग मनीनशत् ॥
स ते शीर्ष्णः कपालानि हृदयस्यच ये विदुः ।
उद्यन्नादित्यः रश्मिभिः शीर्ष्णो रोगमनीनशत् ॥

शब्दार्थ-जो विष (शारीरिक धातु की असमानता) शरीरके अङ्गोंको मदयुक्त करता है। और सम्पूर्ण रोगों को उत्पन्न करता है, उसे मैं दूर करता हूं। तेरे पैर, जानु, श्रोणी कन्धे शिर कपाल हृदय आदि अवयवों में जो रोग रहते हैं उन्हें उदय होता हुआ सूर्य्य अपनी किरणों से दूर करता है।

भावार्थ-इस मन्त्रमें यह समझाया है कि शारीरिक धातुओंकी असमानतासे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं और सूर्य्यकी किरणें उन्हें दूर करती हैं। आज जो "रंग रसायन,, "सूर्य्यरश्मि,,चिकित्सा का आविर्भाव हुआ है उसका बीज इनमन्त्रों में है, और कैसा स्पष्ट लिखा है। पहले सूर्य्यकी किरणोंसे होने वाली चिकित्सा " रश्मिस्नान ,, के नाम से प्रसिद्ध थी।

वायु चिकित्सा ।

यद होवात तेऽमृतस्यनिधिर्हितः ।
ततो नो देहि जीवसे ॥

शब्दार्थ-हे वायु तेरे पास अमृत का कोष है सो हमारे लिये जीवन दान दे।

भावार्थ-वायु से ही हमारा जीवन है इसे छोटा बच्चा भी जानता है। वायु से अनेक प्रकार की चिकित्सा होती है। हम शुद्ध वायु का सेवन कर निरोगी रहसकते हैं।

द्वाविमौ वात आसिंधोरा परावतः।
दक्षं ते अन्य आवातु परोऽन्योवातुयद्रपः॥
आवात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद्रपः।
त्वहिं विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे॥
ऋ० १०। १३७॥

शब्दार्थ-दो प्रकार की वायु हैं। एक समुद्र और दूसरा पृथ्वी के ऊपर से चलता है। समुद्र का वायु बल दाता है और पृथ्वी का वायु हमारे विकारों को साथ लेजाता है। वलवान् वायु ओषधि ले आवे तथा दूसरा वायु विकारों को साथ लेजावे, वायु में सम्पूर्ण ओषधियां हैं इसही से इसे देवदूत कहते हैं॥

भावार्थ-इन मन्त्रों में वायु चिकित्सा का बीज है-वायु में सम्पूर्ण रोगों के दूर करने वाली शक्तियां हैं। शुद्ध वायु हमको अमृत लाती है, अर्थात् जीवन प्रदान करती है। और हमारे घरों में रहने वाली वायु हमारे रोग कारक दुष्ट परमाणुओं को साथ लेकर बाहर निकल जाती है। पहले समय में परिश्रम शील पुरुष केवल वायु में ही रोग नाशक शक्तियों को उत्पन्न कर, अनेक रोगों की चिकित्सा किया करते थे॥

अश्विनीकुमार के विचित्र कार्य

जुजुरुषो नासत्योत वव्रिं प्रामुञ्चतंद्रापिसिवच्यवानात् । प्रातिरतं जहि तस्यायुर्दस्रादित्यतिमकृणुतंकनीनाम् ॥ ऋ०मं०१०अ०१७सू-११६

शब्दार्थ–हे सत्य स्वरूप अग्निदेव ! जिस प्रकार मनुष्य अपना कवच निकालता है, उसी प्रकार आपने वृद्ध च्यवनको जरा अवस्थासे मुक्त किया । और मनुष्यों से त्यागे हुए उस च्यवनकी आयु बढ़ाई और उसको कुमारियोंका पति बनाया ।

भावार्थ–पहले समयमें दिव्य रसायन ओषधियों का अधिक प्रचार था तपस्वी लोग इन जरा व्याधिनाशिनी ओषधियों को अधिक सेवन करते थे देव चिकित्सक अश्विनी कुमार ने नेत्र हीन, वृद्ध च्यवन ऋषि को पुनः युवा बनाकर संसारको चमत्कृत करदिया, रसायन ओषधियों के गुणों में सन्देह करने वाले पुरुषोंको श्रद्धासे इस वैदिक श्रुतिका मनन करना चाहिये । इस मन्त्र में रसायन चिकित्सा का फल दिखाया गया है ॥

चरित्रंहि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितक्म्यायाम् । सद्योजङ्घामायसीं विश्पलायै धने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम् ॥ ऋक्० ।

शब्दार्थ-पक्षी के पङ्ख के समान खेल के युद्ध में रात्रि के समय विश्पला का पैर टूट गया, किन्तु आपने दूसरी बार लड़ाई शुरू होने से पहले ही उसके लोहे का पैर जोड़ दिया।

भावार्थ-अश्विनीकुमार ने अपनी शस्त्रचिकित्सा की कुशलता से इतनी जल्दी दूसरा लोहे का पैर लगा दिया कि दूसरे दिन विश्पला युद्ध करसका, और किसीने यह न पहचाना कि इसके लोहेका पैर लगा है। कहिये पाठको! इससे अधिक शस्त्रचिकित्सा का कौनसा ज्वलन्त उदाहरण चाहते हो।

दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीर्ष्णा प्रयदीमुवाच ॥ ऋक्० मं० १ सू ११६ मन्त्र १२

आपकी कृपा से अथर्ववंश में उत्पन्न हुए दधीच ऋषि ने अश्वका शिर धारण कर आप को मधुविद्या पढ़ा दी।

भावार्थ-इन्द्र ने दधीचि को मधुविद्या इस शर्त पर पढ़ाई कि यदि दूसरे को पढ़ावेगा तो तेरा शिर काट लूंगा। अश्विनीकुमारों ने दधीचि ऋषि के अश्वका शिर लगा कर, उससे मधुविद्या पढ़ली जब इन्द्र को ज्ञात हुआ तो उसने दधीचि के अश्ववाले शिर को काट लिया, पीछे अश्विनी कुमार ने पहिला शिर जोड़ कर दधीचि को पूर्ववत् बनाया। इस प्रकार की शस्त्रक्रिया का उदाहरण क्या वर्त्तमान समय में कहीं मिलेगा?।

अ तं तच्छासुरिव वध्रिमत्या हिरण्यहस्तमश्विनावदत्तम् । ऋक्

शब्दार्थ-वध्रिमती की स्तुति को आज्ञा के समान सुन-कर अश्विनीकुमारों ने उसे हिरण्यहस्त नामक पुत्र प्रदान किया।

भावार्थ-वध्रिमती एक राजा की पुत्री थी उसका पति नपुंसक होगया उसने अश्विनी कुमारसे प्रार्थना की अश्विनी-कुमार ने उसको पुनः पुरुषत्व प्रदान कर दिया। जिससे उसके पुत्र पैदा हुआ। पहिले मन्त्रों में अश्विनी कुमार ने जो रसायन शल्य, शालाक्य, चिकित्साओं द्वारा विचित्र कार्य किये थे वे दिखाये गये हैं। और यह उदाहरण वाजीकरण का है।

युवं नरास्तुवते पज्रियाय कक्षीवते अरदतं पुरन्धिम्॥　　　　ऋक् ८-१-११७-१०

शब्दार्थ-पज्रि के कुल में उत्पन्न हुए कक्षीवान् ने आ-पकी स्तुति की और आपने उसे तीव्र बुद्धि प्रदान की।

भावार्थ-कक्षीवान् की ज्ञान शक्ति नष्ट हो गई थी आपने उसे पूर्ण मेधावी और कुशाग्र बुद्धि बना दिया। मानसिक चिकित्सा का यह उदाहरण है।

हिमेनाग्निं घ्रंसमवारयेयां पितुमतीमूर्ज मस्मा अधत्तं। ऋबीसे अत्रिमश्विनावनीत-मुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति॥

शब्दार्थ-आपने अपने कारागार में पड़े परिवार सहित अत्रि को छुड़ाया और (उस कारागार में) लेटी हुई ताप-

कारक अग्नि को वर्फ डालकर शान्त किया । और अत्रि को वलकारक औषधि को पिला निरोगी किया।

भावार्थ-राक्षसों ने अत्रि को कारागार में बन्दकर बाहर से अग्नि लगा दी। उसने अश्विनी कुमारों की स्तुति की। अश्विनी कुमारों ने उस अग्नि को शान्त किया। और सपरिवार जले हुए अत्रि को पुष्टिदायक ओषधि खिलाकर निरोग किया इससे अश्विनीकुमारों का दयाभाव प्रकट होता है और वैद्य को दयालु होना चाहिये।

शतं मेषान् वृक्ये चक्षदानमृज्राश्वं तं पिताऽन्धं चकार। तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष प्राधत्त दस्रा भिषजावनर्वन् ॥

शब्दार्थ व भावार्थ-ऋज्राश्व की भूल से सौ भेड़ों को एक भेड़िया खागया-जिससे उसके पिता ने क्रुद्ध हो उसे अन्धा कर दिया। शत्रुओं को नाश करने वाले सत्यस्वरूप वैद्यराज आपने देखने के लिये कृपा करके फिर उसको नेत्र प्रदान किये।

याभिः शचीभिर्वृषणा परावृजं प्रान्धं। श्रोणं चक्षस एतवे कृथः ॥ ऋक्

शब्दार्थ-जिस रक्षा करने वाली शक्तियों से आपने लङ्गड़े और अन्धे परावृजको देखने और चलनेकी शक्ति प्रदान की।

——इति वेदों में वैद्यक विज्ञान प्रथम भाग——

॥ इति ॥

वैद्यराज राधावल्लभ जी सम्पादक
"आरोग्यसिन्धु" द्वारा लिखित और
प्रकाशित आयुर्वेदीय पुस्तकें

क्षयादर्श ।

अर्थात्

क्षयरोग और उसकी चिकित्सा ।

क्षय एक भयङ्कर रोग है लाखों नवयुवा प्रति दिन क्षयसे मृत्यु शय्या पर सोते हैं। जिन युवाओं से बड़ी २ आशायें होती हैं जिन के सौरभ के प्यासे अनगिनत मकरन्द गुंजारते रहते हैं। वेही युवा इस दुष्ट रोगसे हमारी शुभाशाओंको धूल में मिला चल बसते हैं। जिस रोग की चिकित्सा करने में वैद्यों के छक्के छूटते हैं। जिसके कारण ढूंढनेमें बड़े २ डाक्टर चक्कर में पड़ जाते हैं। उस ही रोग पर यह पुस्तक लिखी गई है। आयुर्वेदीय साहित्य में ऐसी पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी जिसमें इस पर स्वतन्त्र विवेचन हो, नवीन और प्राचीन मतों का मिलान किया गया हो, तथा सविस्तार चिकित्सा लिखी हो। यह पुस्तक इस कमी की पूर्ति में ही लिखी गई है। इस पुस्तक में क्षय रोग की भयङ्करता, क्षय रोग क्या है, क्षय रोग और कीटाणु, क्षयरोग और नई सभ्यता, क्षयरोग और वीर्य नाश, क्षयरोगका आयुर्वेदोक्त विचार, क्षयरोग के भेद तथा हेतु। क्षयरोग पर डाक्टरों के विचार तथा खण्डन, मण्डन, क्षयरोगकी चिकित्सा, क्रम, स्वास्थ्य गृहों की आवश्यकता उत्तम वायु जल आदिसे क्षयरोगी को स्वास्थ्य लाभ, प्राकृतिक चिकित्सा, आयुर्वेदीय चिकित्सा, प्र०

योग वर्णन, साध्यासाध्य विचार, आदि क्षय सम्बन्धी सब ही विचारणीय विषयों का वर्णन किया गया है। इस के पढ़ने से क्षय सम्बन्धी सबही बातें जानी जाती हैं। वैद्य लोग इस के द्वारा क्षयरोग की चिकित्सा प्रणाली सरल रीतिमें समझ जाते हैं। वैद्य हकीम, तथा सर्वसाधारण सब ही इसे पढ़ लाभ उठावेंगे। मू० ॥≈) प्रति।

रक्त।

आयुर्वेदीय साहित्य में रक्त के ऊपर कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं हैं किन्तु डाक्टरों के यहां बड़े २ पोथे है। इस पुस्तकमें प्राचीन और अर्वाचीन रक्त सम्बन्धी मतों की संगति लगाई गई है। इसमें रक्तकी बनावट, रक्तका संचार रक्तकी उत्पत्ति आदि विषय विस्तार पूर्वक वर्णन करके यकृत्, फेफड़े, तिल्ली आदि अवयवों का भी पूरा २ विवेचन किया गया है। यह पुस्तक भी वैद्यराज जी की लेखनी से लिखी गई है। मू० ≡)

आयुर्वेदीय साहित्य में एक नया मनोरम पुष्प

वेदों में वैद्यक ज्ञान।

वेद हिन्दुओंका जीवन स्वरूप ईश्वरीय ज्ञान, अखिल विद्याओं के भण्डार और अनादि हैं। इस बात को धर्मप्राण, हिन्दू का एक सामान्य बच्चा भी कह देगा। वेदों में हमारे चिकित्सा सम्बन्धी अनेक मन्त्र हैं जिनसे अनेक वैद्यक विषयों का पूरा पता चलता है। विद्वान वैद्यों को ऐसे विषयों के देखने की सदैव अभिलाषा लगी रहती है। हमने उन की इच्छा पूर्ति के लिये इस निबन्ध को लिखा है। इस में ऋक् यजु० और अथर्ववेद से अनेक मन्त्र उद्धृत कर उनका शब्दार्थ

और विस्तृत भावार्थ दियागया है । इसे पढ़ जो अज्ञानी वेदों को किसानोंके गीत बतलाते हैं उनका दिमाग ठिकाने आजावेगा । वैद्यों को इसके देखनेसे अपनी विद्याकी प्राचीनता का अनुभव होगा, सरस्वती, वैद्य कल्पतरु, सुधानिधि, आर्य्यमित्र बंगबासी आदि पत्रों ने इस की प्रशंसा की है । वैद्यों के घर एक २ पुस्तक अवश्य रहनी चाहिये । मूल्य ॥)

सचित्र, सचित्र, (अस्थियां)

शरीर रचना ।

आयुर्वेदीय साहित्यमें शरीर विषयक पुस्तकों की नितान्त कमी है । पश्चिमीय डाक्टरोंने हमारे ही शास्त्रों का सहारा ले शारीरिक ज्ञानमें बड़ी उन्नतिकी है । आज हमको उनके सामने लज्जावश शिर नवाना पड़ता है । जबतक हिन्दी भाषा में नये ढंग की और नवीन ज्ञान युक्त इस विषय की पुस्तकें प्रकाशित न होंगी और वैद्य महोदय उनका मनन और ज्ञानोपार्जन न करेंगे तबतक डाक्टरों के सामने हमको इस विषय में लज्जित ही होना पड़ेगा । हमने अपने वैद्यों के लाभार्थ ऐसी पुस्तकोंको छापना प्रारम्भ कर दिया है । शरीररचना सम्बन्धी यह पहली पुस्तक है । इस में हड्डियोंका प्राचीन और नवीन मतसे वर्णन है । अस्थियों के भेद, प्रत्येक अंग की अलग २ और सम्पूर्ण शरीर की अस्थिगणना, और नाम वर्णित हैं । डाक्टर लोगों के मत से वास्तव में कितनी हड्डियां हैं इस का निश्चय किया गया है । वैद्यों को इसे अवश्य देखना चाहिये । मूल्य ॥) आना

'मरणोन्मुखी आर्य चिकित्सा,

देखो ! देखो !! कहीं मर न जावे !!!

आयुर्वेदीय चिकित्सा, मरने के लिये तैयार है। प्राण सिसक रहे हैं। मृत्य शय्या विछाई जा रही है। क्यों उस के पुत्र बुड्ढी माता का परवा नहीं करते। क्या मर जाने दें? भारतवासी वैद्यो! पूछो अपने मन से। इस निबन्ध में आयुर्वेदीय चिकित्सा की जो दुर्दशा है उस का ओजस्विनी भाषा में वर्णन किया गया है। इसमें साहित्य, पठन पाठन, ज्ञानोपार्जन, कर्त्तव्यनिरूपण, सामग्री सम्पादन, प्रतिष्ठा-स्थापन, शक्ति संगठन, शीर्षक विचार पूर्ण लेख हैं। इस निबन्ध के पढ़ने से अपनी सच्ची सच्ची अवस्था मालूम होगी। बार २ पछताना होगा, मिथ्या अभिमानके कान पकड़े जांयगे एकबार पढ़के देखिये तो सही। मूल्य केवल ≡) तीनआनामात्र

पञ्चकर्म विवेचन।

(लेखक राधावल्लभ वैद्यराज)

पञ्चकर्म द्वारा चिकित्सा करने की प्रणाली वैद्य लोग भूल गये। बहुत थोड़े वैद्य ऐसे मिलते हैं जिन्हें इन का अभ्यास है। बड़े पश्चात्ताप का विषय है कि हम अपने ऋषियों के ज्ञान भण्डार को आंख मीच कर देखते हैं। और डाक्टर लोग हमारी ही विद्या ले तिल का पहाड़ बनाकर दिखाते हैं। डाक्टर कुहनी की जल चिकित्सा जिसे वह नवीन विद्या बतलाते हैं। हमारे पञ्चकर्म का ही भेद है।

अब वैद्यों को इस चिकित्सा पद्धति पर ध्यान देना चाहिये। यह पुस्तक इस ही विषय पर लिखी गई है।

आज तक इस विषय को सविस्तार वर्णन करने वाली और नये ढंग से गहन विषय पर प्रकाश डालने वाली दूसरी पुस्तक नहीं छपी। पाठक इसे पढ़कर पञ्चकर्म का तात्त्विक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इस में स्नेहन, वमन, विरेचन, वस्ति आदि पद्धतियों का पूरा २ वर्णन है। मूल्य १२५ पृष्ठ की पुस्तक का केवल ।-) पांच आने हैं।

तिल्ली [प्लीहा] [पिलही]

जो लोग समाचार पत्र पढ़ते रहते हैं उन्हों ने अदालती फैसलेके वृत्तान्त में पढ़ा होगा "तिल्ली फटगई" या डाक्टर वर्मनके नोटिसमें पिलहीकी दवा पढ़ी होगी। वह तिल्ली क्या है? शरीर में किस जगह है? इसका काम क्या है? इसकी कौन शक्तियां हैं? इन शक्तियों के बिगड़ने से कौन से रोग पैदा होते हैं? इन का पूरा २ वर्णन इस पुस्तक में है। यकृत् और तिल्ली का मुसलमानी पुस्तकों में अच्छा वर्णन है। इस ही शैली का आशय लेकर इस निबन्ध को आयुर्वेदीय मत से लिखा है। तिल्ली के रोगों की विस्तार पूर्वक चिकित्सा भी है। बड़ी अच्छी पुस्तक है। मूल्य ≡)

प्लेग [औपसर्गिक सन्निपात]

भारत वर्षसे अभी इस दुष्ट रोग का काला मुंह नहीं हुआ। प्लेगके ऊपर छोटी २ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। परन्तु उनमें शास्त्रीय विवेचन पूरी रीति से नहीं है। सर्व साधारण और वैद्योंको इस विषयमें पूरी जानकारी होनी चाहिये। यह पुस्तक वैद्यों और आरोग्याकांक्षी पुरुषों को एकबार अवश्य पढ़नी चाहिये, इसमें प्लेगका इतिहास, प्लेग का आयुर्वेदीय

और डाक्टरी मतानुसार विचार, प्लेग का तत्वोंसे सम्बन्ध प्लेग और धर्म्म, संक्रामक रोगोंके कारण, प्लेग प्रतिबन्धक उपाय, प्लेग चिकित्सा आदि विषय विस्तारसे वर्णन किये गये हैं। मू० प्रति पुस्तक ।) चार आना

दोष विज्ञान ।

वैद्यकमें दोषोंका वर्णन बड़े विस्तारसे है। दोषोंकी विषमता रोग, और समानता ही आरोग्यता है। इस पुस्तक में दोषों का बड़े विचार से वर्णन किया है। दोषों का सञ्चय प्रकोप, प्रसर, स्थान संश्रय, व्यक्ति भेद, आदि विषय सरलता से लिखे गये हैं।

विद्यार्थियों को इसे पढ़ा देनेसे वे दोष सम्बन्धी कठिन विषयोंको बड़ी अच्छी तरह समझ जाते हैं। इस पुस्तक की अनेक विज्ञजनों ने प्रशंसा की है। मू० ≈) पृष्ठ संख्या ५०

प्राकृत ज्वर ।

प्राकृत ज्वरको फसली बुखार या मैलेरिया फ़ीवर कहते हैं। डाक्टर लोग इसके विषयमें बड़ी २ बातें मारते हैं, और वैद्य लोग अपने घरकी सच्ची बातें भी नहीं जानते। यह निबन्ध इस विषय पर पहली ही पुस्तक है। इसमें प्रकृति का प्रभाव, रोगोंकी संक्रामता, उपाय योजना, मैलेरिया ज्वर, आयुर्वेद मतसे मैलेरिया क्या है? विषम ज्वर, क्यूनाइन से मैलेरिया पैदा होती है या नष्ट? क्यूनाइनसे हानियां आयुर्वेदीय चिकित्सा, आदि विषय बड़े भावपूर्ण लिखे गये हैं। इसे पढ़कर वैद्य लोग ऐसे विषयोंका पूरा ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, जिनके कारण भारतवासी अनेक कष्ट पाते हैं। सरकार भी जिस से चिन्तित है डाक्टर भी अपने मस्तिष्कों को इस में लड़ाया करते हैं मूल्य ≡) पृष्ठ संख्या ३०

ओज क्या है ?

ओज क्या पदार्थ है ? ओज की उपयोगिता ओजकी क्षय वृद्धिके लक्षण इस पुस्तकमें विस्तारसे लिखे हैं। पश्चिमीय डाक्टरोंके मतका भी समावेश है। दोनों मतों का ऐक्यभाव दिखाया गया है। पुस्तक समझने और मनन करने योग्य है मू० प्रति पुस्तक ०) आना।

चन्द्रोदय।

आयुर्वेदीय चिकित्सा में सर्वप्रधान औषधि चन्द्रोदय अर्थात् मकरध्वज है। जिस प्रकार चन्द्रमा अन्धकार का नाश करता है उसी प्रकार चन्द्रोदय सम्पूर्ण रोगोंका नाश करता है विशेषकर कामोत्तेजक पौष्टिक वीर्य्यवर्धक क्लीवत्व नाशक है। आसन्नमृत्यु रोगी को आयुर्वेदीय चिकित्सक इसका ही सेवन करा आरोग्यलक्ष्मी प्रदानकर कीर्त्तलाभ करते हैं। ऐसी महौषधि प्रत्येक वैद्य और गृहस्थों के यहां रहनी चाहिये किन्तु जैसी श्रेष्ठ औषधि है वैसे ही इसका बनाना भी कठिन है भारतवर्ष में बहुत कम वैद्य ऐसे हैं जो मकरध्वज (चन्द्रोदय) बनाते हैं और जो बनाते हैं वह इस का मूल्य इतना अधिक रखते हैं कि गरीब वैद्य और सर्वसाधारण इतना मूल्य देकर नहीं खरीद सकते, इस अभाव को मिटाने को ही इस पुस्तक की रचना की है इसमें पारद शुद्धि गन्धकशुद्धि, स्वर्णशुद्धि, गन्धकजारण चन्द्रोदय के बनाने की विधि भट्टी बनानेकी विधि चन्द्रोदय के गुण, चन्द्रोदय के भिन्न २ रोगोंमें भिन्न२ अनुपान आदि चन्द्रोदय सम्बन्धी सब ही वातों का विस्तार पूर्वक वर्णन है। मू० प्रति पु० ≡) आना

श्रीधन्वन्तरि औषधालय का

आयुर्वेदीय मासिक पत्र

आरोग्यसिन्धु-

के प्रथम वर्षके १२ अङ्कों की सुन्दर फ़ायल बिकने को तैयार है। इसमें बड़े २ उत्तम सारगर्भित निम्नलिखितलेख है

(१) वेदोंमें वैद्यक ज्ञान-इस लेखमें ऋक्, यजुः, अथर्व, वेदोंके अनेक मन्त्र जिसमें आयुर्वेदीय विषयों का वर्णन है। तथा जिससे आयुर्वेद की प्राचीनता सिद्ध होती है। (२) ज्वर और लंघन-इस लेखमें ज्वर में लंघन क्यों कराने चाहिये इसका सविस्तार वर्णन है (३) मलेरिया और क्यूनाइन इसमें मलेरिया का सविस्तार वर्णन है और क्यूनाइन का खण्डन बड़ी योग्यता से किया है। (४) शरीर रचना-इसमें मस्तिष्क सम्बन्धी अनेक चित्र दियेगये हैं और कौन २ शक्ति कौन २ से स्थान में है उनका विवेचन डाक्टरी और वैद्यकीय मतानुसार किया है। क्षयरोग-इसमें क्षयरोगका बड़ा योग्यता पूर्वक विवेचन किया है। (६) रसायन औषधियों से आयुवृद्धि-इसमें रसायन औषधियों से आयुवृद्धि हो सकती है या नहीं और किस प्रकार हो सकती है इसका शास्त्रोक्त और अनेक युक्तियों द्वारा विवेचन किया है। (७) भूतविद्या यह आयुर्वेद का एक अंग क्यों माना है उस का तात्त्विक विवेचन है। (८) मोती ज्वर और उसकी चिकित्सा-इसमें मोती ज्वर के भेद लक्षण और अनुभूत चिकित्सा का वर्णन है। (९) शीतज्वर मलेरिया की चिकित्सा-इसमें अनेक

प्रयोग अनुभूत और तत्क्षण लाभ देने वाले वर्णन किये हैं। इनके अतिरिक्त अनेक उपयोगी बिचार पूर्ण लेख हैं। जिन की प्रशंसा अनेक सहयोगियों ने और वैद्यों ने की है। मूल्य बिना जिल्द १॥) रु० जिल्ददार १॥।) रु० है।

सूचना—जो महानुभाव उपरोक्त १२ पुस्तकें और आरोग्यसिन्धु की १ फाइल जिल्ददार एकसाथ मगावेंगे उनसे ४।≋) के स्थान में ३।) ही लिये जायगें। और जो सज्जन सिर्फ १२ पुस्तकें ही मगावेंगे उनसे २≋) लिये जायगें। पोस्टव्यय प्रत्येक अवस्था में ग्राहकों को ही देना होगा।

विशेष सूचना—जो महानुभाव १२ पुस्तकें और १ फायल मगावेगें उनको उपहारमें १ वर्षतक धन्वन्तरि नामक मासिकपत्र बिना मूल्य प्रतिमास भेजा जाया करेगा।

समालोचनाएं—उपरोक्त १२ पुस्तकों की जिन पत्रों ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की है उनके नाम यहां लिखे जाते हैं। सरस्वती प्रयाग, सुधानिधि प्रयाग, वैद्य मुरादाबाद, वैद्य कल्पतरु अहमदाबाद, चिकित्सक कानपुर, भारत मित्र कलकत्ता मित्र रूस्तमगढ़, मिथिलामिहिर दरभंगा, हिन्दीबंगवासी कलकत्ता, हिन्दीविहारी पटना, धर्मोदय मेरठ, ब्राह्मणसर्वस्व इटावा, नवजीवन प्रयाग सनाढ्योपकारक आगरा, जैनगजट मथुरा देशोपकारक लाहौर, हिन्दीसमाचार दिल्ली, शिक्षा बांकीपुर, धन्वन्तरी गुजराती वीसनगर, वैद्यकपत्रिका मराठी पूना श्रीवेङ्कटेश्वर बम्बई।

वैद्यों के लिये—

अल्प मूल्य में आयुर्वेदीय शास्त्रोक्त बनी हुई औषधियां भजने का हमने विशेष प्रबन्ध किया है। हमारे यहां की औषधियां शास्त्रोक्त प्रक्रियानुसार विश्वसनीय बनती हैं। वैद्य लोग जिस प्रकार विश्वास करना चाहें कर सकते हैं। यदि हमारी औषधियां ठीक प्रक्रियानुसार न बनी हों या वैद्यों के पसन्द न आवे तो वे हमको समझाकर और उचित परामर्श दे वापिस कर सकते हैं हम आशा करते हैं कि वैद्य लोग इस प्रबन्ध से अवश्य प्रसन्न होंगे तथा समुचित लाभ उठावेंगे। वैद्य महानुभावों को थोक औषधियों का सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर देखना चाहिये। दिग्दर्शनार्थ कुछ औषधियों का मूल्य यहां लिखा जाता है।

कूपी पक्व रसायन

नाम औषधियों का	ग्रंथों के नाम	मूल्य थोक के भावका
स्वर्णघटितषट्गुणबल जारित मकरध्वज अन्तर्धूमविपाचित	भैषज्य रत्नावली	१ तो० २५)
,, बहिर्धूम ,,	,,	१ तो० १५)
स्वर्ण सिन्दूर-अंतर्धूम ,,	रसायन सार	१) तो० १०)
" बहिर्धूम ,,	,,	१) तोला ६)

नाम औषधियों का	ग्रन्थों के नाम	मूल्य थोकके भावका
रस सिन्दूर-अन्तर्धूम ,,	रसेन्द्र सार संग्रह	२॥ तो० ८)
,, वहिर्धूम ,,	,,	२॥तो० ५)
मल्ल सिन्दूर ...	रसायन सार	१ तो० ४)
ताल सिन्दूर ...	,,	१ तो० ५)
ताम्र सिन्दूर ...	,,	१ तो० ४)
स्वण बङ्ग भस्म ...	रसप्रकारसुधाकर	१ तो० २)

धातुओं की भस्म।

स्वर्ण भस्म निरूथ्य ...	आयुर्वेद प्रकाश	६ माशे २५)
रौप्यभस्मपारदयोगसेनिरूथ्य	,,	१ तो० ४)
,, हरतालयोगसे ,,	,,	२ तो० ४)
ताम्र भस्म पारदयोग से ,,	योगरत्नाकर	२ तो० २)
,, गन्धक योग से ...	रसायनसार	५ तो० १)
लोह भस्म दरदयोगेन ...	रसेन्द्रसार संग्रह	५ तो० २)
,, साधारण ...	रसायनसार	१०तो० २)

* धातुओंकी भस्में अपने अनुभव और उपरोक्त ग्रन्थोंके आधार पर बनाई जाती हैं।

ओषधियों के नाम	ग्रन्थों के नाम	मूल्य थोक के भावका
स्वर्णमाक्षिक भस्म	वृ० रसराजसुन्दर डोड़रानद	५ तोला २॥)
बंगभस्म [वंगेश्वर] हरताल योगसे निरूत्थ	रसायनसार	५ ,, ३)
बंगभस्म [बनौषधियोंसे] श्वेत	आयुर्वेद प्रकाश	१०,, ३)
त्रिवंग भस्म ...	रसायनसार	५ ,, २॥)
नागभस्म मंशिलयोगसे निरूत्थ	रसेन्द्रसार संग्रह	५ ,, ३)
” [बनौषधियोंसे] पीतवर्ण	आयुर्वेद प्रकाश	१०,, २॥)
यशद भस्म [निम्बयोगसे]	”	५ ,, ५)
अभ्रक भस्म शतपुटी ...	आयुर्वेद प्रकाश रसायनसार	५ ,, ५)
” २५ पुटी ...	”	१०,, ४)
माण्डूर भस्म--रक्तवर्ण ...	रसराजसुन्दर	५ ,, १।)
” कृष्णवर्ण ...	”	१०,, २)
प्रवालभस्म [मूंगाकीभस्म]	योगरत्नाकर	५ ,, २)
मुक्ता भस्म [मोतीकीभस्म]	”	६माशे १५)
गोदन्ती हरताल भस्म ...	रसायनसार	५तोला १)
शंख भस्म ...	”	१०,, १।)
कपर्द भस्म [कौड़ी भस्म]	रसराजसुन्दर	१०,, १।)
शुक्तभस्म [मोतीकीसीपकी]	”	५ ,, २)

रसादि औषधियां ।

नाम औषधियों के	नाम ग्रन्थों के	मूल्य थोक के भाव का
मृगांकभस्म (मृगांक पोटलीरस)	भैषज्यरत्नावलीप्र०२४	६माशे२५)
वसन्त कुसुमाकर ...	रसरत्नाकर	३ ,, ५)
स्वर्ण वसन्त मालती— (स्वर्ण मालती वसन्त)	बृ० निघन्टरत्नाकर चतुर्थभाग	१ तोले ६)
कस्तूरी भैरव रस ...	भैषज्यरत्नावली	६ माशे५)
,, भूषण रस ...	,,	६ ,, ४)
स्वर्ण पर्पटी रस ...	रसराजसुन्दर ३०	६ ,, ५)
पंचामृत पर्पटी रस ...	,, ३२	६ ,, ३)
लोह पर्पटी रस ...	,, ३०	१ तोले ४)
रस पर्पटी ...	,, प्र० ३०	१ ,, ४)
क्रव्यादि रस ...	भैषज्यरत्नावली३१६	५ तोला३)
प्राणेश्वर रस ...	रसराजसुन्दर२२७	५ ,, ८)
चौंसठ पहरा पीपल ...	बीजोंको ६४ पहर बराबर घोंटेगयेहैं	१ ,, ३)
चन्द्रप्रभा वटी शिलाजीत और लोहभस्म मिश्रित	शार्ंगधर	२०तो० ५)
मृत्युञ्जय रस ...	भावप्रकाश ...	५ तो० १)
संजीवनी रस ...	योग चिन्ता मणि	५ ,, १)
आनन्द भैरव रस ...	शार्ंगधर ...	५ ,, १)
ज्वरांकुश रस ...	शार्ंगधर १५१ ...	५ ,, १)
बृ० शंखवटी ...	भैषज्यरत्नावली३१६	२०तोले५)
शंखवटी ...	रसराजसुन्दर३१८	२० ,, ३)
गन्धक वटी ...	,, ३३६	२० ,, २)

ग्रहणी गजेन्द्र ।

गले में दाह आदि सब विकार "ग्रहणी गजेन्द्र" के सेवन से नष्ट होते हैं । शरीर नीरोग होकर बलवान् हो जाता है भूख समय पर लगती है । मूल्य २।) पोस्ट व्यय ।) आना ।

दाद की दवा ।

जिन लोगों को दाद खुजाते २ रात्रि को नींद नहीं आती वे हमारे इस दाद के दुश्मन को मंगाकर लगावें इसके लगाते ही चैन मालूम पड़ेगा । किसी तरह की तकलीफ न होगी । दो तीन दिनमें ही दादसे पीछा छूट जायगा । मूल्य ।)डिब्बा

दशन संस्कार चूर्ण ।

मसूड़ों का फूलना, खून का बहना, दांतों का हिलना इत्यादि दांतों के रोगों को दूर करता है । नित्य प्रति मलने वाले दन्त रोग से पीड़ित नहीं होते । दांत सफेद हो जाते हैं । मुख सुगन्धित रहता है । दांत मजबूत रहते हैं । एक डिब्बी चूर्ण १ महीनेके लिये काफी है मू० ।=) डिब्बी । नमूना मंगा कर देखिये ।

ज्वर जूड़ी की गोलियां ।

यह गोलियां विषवात ज्वर (मैलेरिया) के लिये राम-बाण हैं । कौनेन से भी विशेष गुण रखती हैं । गरमी नहीं लातीं मूल्य ॥) डिब्बी ।

सूचना—इन ओषधियों के अतिरिक्त और भी रसादि औषधियां अरिष्ट, आसव, तैल, घृत, चूर्ण, चटनी, क्षार, सत्व अवलेह आदि सबप्रकार की आयुर्वेदीय औषधियां, और वनौषधियां तैयार रहती हैं सूचीपत्र मगा देखिये।

* बनौषधियां *

हमने अपने कार्य्यालयमें बनौषधि विभाग भी खोलदिया है। इस विभाग में भारत वर्ष के सभी प्रान्तों से बनौषधियां मंगाकर संग्रह की जाती हैं। और वैद्यों को स्वल्प मूल्य में भेजी जाती हैं अतः आपसे प्रार्थना है कि अपने यहां की उत्पन्न हुई बनौषधियों की सूची और भाव लिखिये। तथा जो औषधियां आपके यहां न मिलती हों वह हमारे यहांसे स्वल्प मूल्य में मंगाइये।

॥ शुद्ध शिलाजीत ॥

आज कल शुद्ध शिलाजीत के स्थान में अनेक चीजें वेची जा रहीं है। शुद्ध शिलाजीत सर्व साधारण को मिलना अति कठिन होगया है यह देख हमने शुद्ध शिलाजीत बद्रिकाश्रमसे मंगाकर रक्खा है। और सर्वसाधारण के हितार्थ मूल्य भी कम अर्थात् १ तोला का १॥) और १० तोला का ७) रुपये।

पुस्तकें और ओषधियां मिलने का पता—

बांकेलाल गुप्त

मैनेजर धन्वन्तरि कार्य्यालय

बिजयगढ़ जिला अलीगढ़

५५/५